वर्ष : 2021-22
अंक- प्रथम

धरा गुर्जरी

लोकहितार्थ सत्यनिष्ठा
Dedicated to Truth in Public Interest

कार्यालय, प्रधान महालेखाकार (लेखापरीक्षा – II) गुजरात
कार्यालय, प्रधान निदेशक, लेखापरीक्षा (केन्द्रीय) अहमदाबाद

विजय विलास महल

1920 के दशक में बना यह महल मांडवी से 7 किलोमीटर पश्चिम में समुद्र तट के साथ स्थित है। मूल रूप से कच्छ के शासकों के लिए ग्रीष्मकालीन निवास के रूप में प्रयोग किए जाने वाले इस महल की पहली मंज़िल अब भुज के महाराजा का मुख्य निवास है।

बलुआ पत्थर पर इंडो-यूरोपीय शैली की इस संरचना में व्यापक जाली का काम, रंगीन कांच, गुंबददार बुर्ज और भित्ति चित्र हैं जिनसे कच्छ समुदाय के कारीगरों का प्रभाव और उनकी अनूठी शैली स्पष्ट होती है।

महल का निर्माण कच्छ के महाराव श्री खेंगरजी-तृतीय के शासनकाल में हुआ था जिन्होंने यह महल अपने बेटे और राज्य के उत्तराधिकारी युवराज श्री विजयराज जी के लिए ग्रीष्मकालीन रिज़ॉर्ट के तौर पर बनाया गया था। उनके नाम पर इस महल का नाम 'विजय विलास पैलेस' रखा गया है।

महल की 450 एकड़ संपत्ति में व्यक्तिगत स्वामित्व वाला समुद्र तट एक अनूठा आकर्षण है। पूर्व राजसी परिवार अब समुद्र तट स्थल पर एक टेंट रिज़ॉर्ट में आवास प्रदान करता है जिसमें प्रत्येक कमरे में ब्रिटिश औपनिवेशिक शैली के लकड़ी के फर्नीचर, आधुनिक बाथरूम और एक आंगन है।

धरा गुर्जरी

वर्ष: 2021-22 अंक-प्रथम

संरक्षक:

श्री एच. के. धर्मदर्शी, प्रधान महालेखाकार

श्री विजय एन. कोठारी, प्रधान निदेशक

संपादक मंडल:

श्रीमती मोनिका दवे, वरिष्ठ लेखापरीक्षा अधिकारी

डॉ. संदीप बाजपेई, वरिष्ठ लेखापरीक्षा अधिकारी

श्री मनोज कुमार बघेला, वरिष्ठ लेखापरीक्षा अधिकारी

श्री रवीन्द्र सचान, वरिष्ठ लेखापरीक्षा अधिकारी

सुश्री ममता सिंह, सहायक लेखापरीक्षा अधिकारी

संपादकीय

प्रधान महालेखाकार (लेखापरीक्षा-II) गुजरात एवं प्रधान निदेशक लेखापरीक्षा (केंद्रीय), अहमदाबाद के कार्यालयों की संयुक्त हिन्दी पत्रिका "धरा गुर्जरी" का वर्ष 2021-22 का प्रथम अंक आप सभी के समक्ष प्रस्तुत करते हुए बहुत प्रसन्नता हो रही है।

वर्ष 2020-21 में पहली बार हम पत्रिका के दो अंक प्रकाशित कर पाये। इस उपलब्धि के लिए सभी रचनाकार, हिन्दी शाखा तथा पत्रिका के प्रकाशन से जुड़े सभी लोग धन्यवाद के पात्र हैं।

पूर्व के अंकों की भांति यह अंक भी विभिन्न विधाओं में स्वरचित रचनाओं का एक सुंदर संग्रह है जिसमें संस्मरण, लेख तथा कवितायें इत्यादि सम्मिलित हैं।

पत्रिका में प्रख्यात साहित्यकार सुश्री सुभद्रा कुमारी चौहान की रचनाओं, रैन्समवेयर पर एक रोचक नाटक, कार्यालय में कार्य को सुगम बनाने वाले कंप्यूटर अनुप्रयोगों पर एक ज्ञानवर्धक लेख, ध्यान, परोपकार और अंधविश्वास पर लेख इत्यादि सम्मिलित हैं जिन्होंने इसे एक रंगबिरंगा कलेवर प्रदान किया है।

संपादक मण्डल एवं संरक्षक मण्डल कार्यालय प्रधान महालेखाकार (लेखापरीक्षा-II) तथा कार्यालय प्रधान निदेशक के सदस्यों का आह्वान करते हैं कि भविष्य में भी अधिकाधिक संख्या में स्तरीय स्वरचित रचनाएँ प्रदान करने के क्रम को जारी रखें ताकि गत वर्ष की भांति हम प्रति वर्ष पत्रिका के कम से कम दो अंक प्रकाशित करते रहें।

संपादक मण्डल द्वारा सभी पाठकों को साधुवाद है जिनके अमूल्य सुझाव और प्रतिभाव इस पत्रिका की गुणवत्ता में निरंतर सुधार करने में सहायक सिद्ध हुए हैं। आशा है, आप सभी पाठकों का सहयोग सदैव इसी प्रकार प्राप्त होता रहेगा।

अनुक्रमणिका

क्रम	रचना का नाम	रचनाकार	विधा	पृष्ठ
1.	सुभद्रा कुमारी चौहान	श्री अनुपम कुलश्रेष्ठ, उप नियंत्रक एवं महालेखापरीक्षक (सेवानिवृत्त)	लेख	5
2.	ज़िम्मेदार कौन	श्री अजय कुमार शुक्ल, सहायक लेखापरीक्षा अधिकारी	नाटक	8
3.	कर्मचारी जीवन सुधार योजना	श्री अजय कुमार शुक्ल, सहायक लेखापरीक्षा अधिकारी	लेख	13
4.	एक नया शहर, एक नया अनुभव	आदित्य पंत, उपमहालेखाकार	लेख	19
5.	तेरे रंग न्यारे	श्री अनिल अहलान, विभागीय लेखाकार	कविता	20
6.	ध्यान (Meditation)	श्री अनिल कुमार बेनीवाल, वरिष्ठ लेखापरीक्षा अधिकारी	लेख	21
7.	हमारी दहेगाम यात्रा	श्री अमनदीप, बहु-कार्य कर्मचारी	लेख	25
8.	जीवन की साँझ	एम. श्रीनिवास राव	लेख	28
9.	मजनू का टीला	गौरव वर्मा, सहायक लेखापरीक्षा अधिकारी	लेख	30
10.	काश ! ऐसा हो	सुश्री चारू गोयल, सहायक लेखापरीक्षा अधिकारी	कविता	32
11.	पर ज़रुरी नहीं है रुकना	श्री चिंटू गुप्ता, लेखापरीक्षक	कविता	34
12.	ब्रह्माण्ड का उद्भव	श्री नरेंद्र प्रताप, वरि लेखाकार	लेख	35
13.	जी ले बन्दे	सुश्री निहारिका उप्पल, वरिष्ठ लेखाकार	कविता	37
14.	बस, हिम्मत न हार	सुश्री नंदिनी गर्ग, सहायक लेखा अधिकारी	कविता	39
15.	ख़ुदा की नेमत	सुश्री पल्लवी यादव, विभागीय लेखाकार	कविता	40
16.	पिता की महानता	श्री बिनय कुमार, बहु-कार्य कर्मचारी	कविता	41
17.	परोपकार और अन्धविश्वास	श्री मनोज कुमार बघेला, वरिष्ठ लेखापरीक्षा अधिकारी	लेख	47
18.	पिता	श्री मयंक मिश्रा, सहायक लेखापरीक्षा अधिकारी	लेख	50
19.	सुनना भी एक कला है	श्रीमती मोनिका दवे, वरिष्ठ लेखापरीक्षा अधिकारी	लेख	52
20.	कुछ तो बात थी	श्री राज कुमार सिंहल, सहायक लेखापरीक्षा अधिकारी	कविता	56

21.	लॉकडाउन उपरांत काल्पनिक प्रथम दिवस	श्री राजेश कुमार बागड़ी, वरिष्ठ लेखापरीक्षक	कविता	57
22.	हिंदी को अपनाएं हम	श्री विश्वपति सिंह, वरिष्ठ लेखापरीक्षा अधिकारी	कविता	58
23.	पथ का राही	सुश्री वीणा रणदीवे, पर्यवेक्षक	कविता	60
24.	एक यात्रा स्व-मंथन की	श्री वीरेन्द्र कुमार डैला, वरिष्ठ लेखापरीक्षा अधिकारी	लेख	61
25.	भाषा की आवश्यकता और संपर्क भाषा हिंदी	श्री शिवानंद, कनिष्ठ हिंदी अनुवादक	लेख	63
26.	हॉर्न, नॉट आलवेज़ ओके प्लीज़	डॉ. संदीप बाजपेई, वरिष्ठ लेखापरीक्षा अधिकारी	लेख	65
27.	मरघट	श्री सत्येंद्र कुमार, सहायक लेखापरीक्षा अधिकारी	कविता	70
28.	शिक्षा का निजीकरण	श्री सुखदेव गोयल, कनिष्ठ हिंदी अनुवादक	लेख	72
29.	एक दिन उम्मीदों का	सुश्री सुनीता शॉ, बहु-कार्य कर्मचारी	कविता	73
30.	हाईस्कूल रिज़ल्ट (2000-2021): एक जायज़ा	श्री सौरभ सिंह, सहायक लेखापरीक्षा अधिकारी	लेख	76
31.	ईश्वर का अस्तित्व	श्री हुसैनी सादिकोट, वरिष्ठ लेखा अधिकारी	लेख	78
32.	मेरी उलझन	श्री हिमांशु धर्मदर्शी	लेख	84

इस अंक में सम्मिलित रचनाओं में व्यक्त विचारों का प्रत्यक्ष एवं परोक्ष उत्तरदायित्व स्वयं रचनाकारों का है। रचनाकारों के विचारों से संपादक मण्डल या कार्यालय का सहमत होना आवश्यक नहीं है।

प्रकाशन सहयोग:

1. श्री पवन सिंगला, हिन्दी अधिकारी, कार्यालय प्रधान महालेखाकार (लेखापरीक्षा-II) गुजरात, अहमदाबाद
2. श्री मौलिक बी. पटेल, हिन्दी अधिकारी, कार्यालय प्रधान निदेशक, लेखापरीक्षा (केन्द्रीय), अहमदाबाद
3. श्री अजय कुमार शुक्ल, सहायक लेखापरीक्षा अधिकारी
4. श्री अभिषेक कुमार, वरिष्ठ हिन्दी अनुवादक
5. श्री शिवानंद, कनिष्ठ हिन्दी अनुवादक
6. श्री चिंटू एम. गुप्ता, लेखापरीक्षक

सुभद्रा कुमारी चौहान

अनुपम कुलश्रेष्ठ
उप नियंत्रक एवं महालेखापरीक्षक (सेवानिवृत्त)

गूगल डूडल पर सुभद्रा कुमारी चौहान जी की तस्वीर देख आनन्द अतिरेक हुआ। अपनी एक ही कविता (खूब लड़ी मर्दानी वह तो झांसी वाली रानी थी) से ख्याति पा जाने वाली सुभद्रा जी हिंदी साहित्य की एक जगमगाती किरण होने के साथ एक स्वतंत्रता सेनानी भी थीं। 16 अगस्त 2021 के गूगल डूडल में सुभद्रा कुमारी साड़ी पहने नज़र आ रही हैं। उनके हाथ में कलम है और वह कुछ लिख रही हैं। उनके पीछे रानी लक्ष्मीबाई और स्वतंत्रता आंदोलन की झलक है।

16 अगस्त 1904 को उत्तर प्रदेश में जन्मीं सुभद्रा जी को बचपन से ही कविताएं लिखने का शौक था। पहली कविता 9 वर्ष की उम्र में ही लिख डाली, कुल मिला कर दो कविता संग्रह (मुकुल और त्रिधारा) और तीन कथा संग्रह (मोती, उन्मादिनी और सीधे साधे चित्र) प्रकाशित हुए। इसके अलावा बच्चों के लिए लिखी उनकी कविताओं ने हिंदी में बाल कविता का नया अध्याय लिखा। उनकी कहानियों में नारी स्वातंत्र्य का उद्घोष है। सुभद्रा जी महात्मा गांधी के असहयोग आंदोलन में भाग लेने वाली पहली महिला थीं। सुभद्रा कुमारी ने भारत की आज़ादी की लड़ाई में सक्रिय भूमिका निभाई, जिस वजह से कई बार उन्हें जेल भी जाना पड़ा। उन्होंने अपनी रचनाओं के माध्यम से दूसरे लोगों को आज़ादी की लड़ाई में शामिल होने के लिए प्रेरित किया।

सुभद्रा और महादेवी वर्मा दोनों बचपन की सहेलियाँ थीं। बड़ी होने पर इन दोनों ने साहित्य के क्षेत्र में बहुत नाम कमाया। दोनों ने एक-दूसरे की कीर्ति से सुख पाया। 15 फरवरी 1948 को 44 साल की उम्र में ही उनका निधन हो गया। अपनी मृत्यु के बारे में सुभद्रा कुमारी चौहान ने एक बार कहा था, "मेरे मन में तो मरने के बाद भी धरती छोड़ने की कल्पना नहीं है। मैं चाहती हूं, मेरी एक समाधि हो, जिसके

चारों तरफ मेला लगा हो, बच्चे खेल रहें हो, स्त्रियां गा रही हों और खूब शोर हो रहा हो।"

प्रस्तुत हैं उनकी कुछ कवितायें :

1.उपासना
देव! तुम्हारे कई उपासक कई ढंग से आते हैं
सेवा में बहुमूल्य भेंट वे कई रंग की लाते हैं
धूमधाम से साज-बाज से वे मंदिर में आते हैं
मुक्तामणि बहुमुल्य वस्तुऐं लाकर तुम्हें चढ़ाते हैं
मैं ही हूँ गरीबिनी ऐसी जो कुछ साथ नहीं लायी
फिर भी साहस कर मंदिर में पूजा करने चली आयी

2.वीरों का कैसा हो वसंत
आ रही हिमालय से पुकार
है उदधि गरजता बार बार
प्राची पश्चिम भू नभ अपार;
सब पूछ रहें हैं दिग-दिगन्त
वीरों का कैसा हो वसंत
फूली सरसों ने दिया रंग
मधु लेकर आ पहुंचा अनंग
वधु वसुधा पुलकित अंग अंग;
है वीर देश में किन्तु कंत
वीरों का कैसा हो वसंत

3.'जलियाँवाले बाग में वसंत" में उन्होंने लिखा-
परिमलहीन पराग दाग-सा बना पड़ा है
हा ! यह प्यारा बाग खून से सना पड़ा है।
आओ प्रिय ऋतुराज? किंतु धीरे से आना
यह है शोक-स्थान यहाँ मत शोर मचाना।
कोमल बालक मरे यहाँ गोली खा-खाकर

कलियाँ उनके लिए गिराना थोड़ी लाकर।

4.और अंत में 'सभा का खेल' नामक उनकी बाल कविता जिसमें खेल-खेल में राष्ट्र भाव जगाने का प्रयास है, ध्यान दीजिये यह कविता भारत छोड़ो आन्दोलन से पहले लिखी गयी थी -

सभा-सभा का खेल आज हम खेलेंगे, जीजी आओ
मैं गांधी जी, छोटे नेहरू, तुम सरोजिनी बन जाओ।
मेरा तो सब काम लँगोटी गमछे से चल जाएगा
छोटे भी खद्दर का कुर्ता पेटी से ले आएगा।
मोहन, लल्ली पुलिस बनेंगे, हम भाषण करने वाले
वे लाठियाँ चलाने वाले, हम घायल मरने वाले।

जन्मदिवस पर इस महान साहित्यकार को नमन।

ज़िम्मेदार कौन

अजय कुमार शुक्ल
सहायक लेखापरीक्षा अधिकारी

(यवनिका उठती है, एक सरकारी कार्यालय की पार्किंग का दृश्य है, जिसमें धूल से सनी मोटरसाइकलें, स्कूटर एवं कारें खड़ी हैं। एक कार के पीछे दो स्कूटर खड़े हैं, जिनकी सीटो पर दो कर्मचारी आड़े बैठे हुए हैं तथा वार्तालाप कर रहे हैं। एक का नाम है रयान एवं अन्य का नाम है स्यान।)

रयान: ब्रो, तूने लंच किया ?

स्यान: नो ब्रो, बहोत टेंशन है, क्या करूं, चल सिगरेट निकाल।

(दोनों सिगरेट फूंकने लगते हैं, तथा सिगरेट पीते-पीते पुन: वार्तालाप करते हैं।)

रयान: क्या हुआ, क्यों परेशान है ?

स्यान: भाई, आज कम्प्यूटर में कोई डाटा नहीं दिख रहा है। जो सारा काम महीने भर में किया था, सब गायब हो गया, नहीं दिख रहा है। महीने भर की मेहनत बेकार गयी। इंपोर्टेन्ट डाक्यूमेंट भी गायब है। समझ में नहीं आता सर को क्या जबाब दूंगा ? कैसे सारा काम वापस आयेगा ?

रयान: तू परेशान न हो, चल अपना कम्प्यूटर दिखा।

दृश्य:दो

(सरकारी कार्यालय का एक कक्ष, जहाँ कुछ कम्प्यूटर रखे हुए हैं।)

स्यान: यह देख, मेरा कम्प्यूटर, इसमें यह मैसेज आ रहा है कि "चार सौ डॉलर चुकाओ और अपना डाटा वापस पाओ"।

रयान : यह रैनसमवेयर का क्रिया- कलाप है। रैनसमवेयर कम्प्यूटरों में डाटा को समेटकर एन्क्रिप्ट कर देता है, फलस्वरूप यूज़र जब तक पैसे चुकाकर पासवर्ड या डिक्रिप्शन की विधि को नहीं प्राप्त कर लेता, वह अपना डाटा

वापस नहीं पा सकता। ऐसा समझो कि रैनसमवेयर फ़ाइलो का अपहरण करकर उन्हें बंधक बनाकर रखता है। अब पैसे चुकाकर ही डाटा वापस मिल सकता है।

स्यान: लेकिन यह रैनसमवेयर आया कैसे ? ऑफ़िस वाले ऐसा बेकार कम्प्यूटर क्यों देते हैं? अब इसका जिम्मेदार कौन है ?

रयान: लेकिन यह प्रोग्राम लिस्ट में देख रहा हूँ कि तुमने यह वीडियो-कटर, एम.पी.3 डाउनलोडर, फ्री सॉन्ग प्लेयर वगैरह फ़ालतू के सॉफ़्टवेयर डाउनलोड करके इंस्टाल किये हुए हैं?

स्यान: यार मन बहलाने के लिए कुछ तो चाहिए, थोड़ा इंटरटेनमेंट भी तो चाहिए, तो टोरेंट से डाउनलोड कर लेता हूँ।

रयान: हम इंडियन्स को सिर्फ़ तीन चीज़ों की ज़रूरत रहती है, वह है: इंटरटेनमेंट, इंटरटेनमेंट, और इंटरटेनमेंट। तो अब हो रहा है न तेरा इंटरटेनमेंट। भाई, यह सभी मुफ़्त के सॉफ्टवेयर मुफ़्त की दारू की तरह है जिसे चारे की तरह यूज़ करके काँटे में फँसाया जाता है। आज तू फँस गया इस काँटे में। इन सभी सॉफ़्टवेयर में मॉलवेयर, रैंसमवेयर, वायरस वगैरह वगैरह छुपे रहते है, इन्हें इंस्टाल करते ही कम्प्यूटर हैक हो जाता है।

स्यान: (सिर पर हाथ फेरते हुए एवं झुकी नज़र से) : छोड़ न भाई।

रयान : पहले तो ऐसी असुरक्षित वेबसाइटों पर जाना ही नहीं चाहिए, न ही टोरेंट या अन्य किसी असुरक्षित माध्यम से डाउनलोड करना चाहिए। यह ऑफ़िस का कम्प्यूटर है न कि कोई टी.वी.। काम किया कर, इंटरटेनमेंट मत कर। तूने तो गेम भी डाउनलोड कर रखे हैं, अंजान वेबसाइटों से। वायरस तो आयेगा ही।

स्यान : चल, अब नहीं करूंगा।

रयान : और यह फ़ायरवाल किसने ऑफ़ किया है ?

स्यान : फ़ायरवाल, वेबसाइटों को ब्लॉक कर रहा था, इसलिए ऑफ़ कर दिया

रयान : फ़ायरवाल असुरक्षित वेबसाइटों को ब्लॉक करता है, इसलिए इसे हमेशा ऑन रखना ज़रूरी है।कम्प्यूटर की सुरक्षा सेंटिग के साथ छेड़छाड़ नहीं

करनी चाहिए। एंटीवायरस को भी कभी भी डिएक्टिवेट नहीं करना चाहिए।

स्यान : लेकिन भाई, रैंसमवेयर आने के पहले मैंने एक सरकारी वेबसाइट खोली था, जिसे मैंने यह देखने के लिए खोला था कि मुझे क्या-क्या सरकारी सुविधा मिलगी। मैंने उसमें अपना पैन नम्बर, मोबाईल नम्बर, आधार और क्रेडिट कार्ड नम्बर डाला और तब उस सरकारी वेबसाइट से एक फ़ाइल् डाउनलोड हुई। जैसे ही उस फ़ाईल को मैंने खोला, तुरंत रैंसमवेयर आ गया।

रयान : लेकिन तुम्हें कैसे लगा कि वह सरकारी वेबसाइट थी ?

स्यान : क्योकि उसका नाम था 'सरकारी सुविधा डॉटकॉम'

रयान : अरे पगले ! सरकारी वेबसाइट के अत: में हमेशा डॉट जीओवी डॉट इन (.gov.in.) होता है, मतलब, उसका डोमेन डाटा गोव डाट इन में होता है। न कि डॉट कॉम' में।

स्यान : अच्छा !

रयान : और यह बता तूने सिस्टम एडमिन को रैंसमवेयर के बारे में बताया !

स्यान : यह सिस्टम एडमिन कौन है ?

रयान : वही, आई.टी. वाला !

स्यान : ओह !

रयान : जब भी कोई वायरस या मॉलवेयर अटैक हो तो उसकी सूचना तुरंत सिस्टम एडमिन को देनी चाहिए जिससे सही समय पर सही उपाय किए जा सकें। नहीं तो वायरस और मालवेयर अन्य कम्प्यूटरों पर भी फैल जाएगा। किसी भी घटना या ख़तरे की जानकारी को तुरंत शेयर करों।

स्यान : ठीक है सिस्टम एडमिन को बता दूँगा ।

रयान : आगे से कम्प्यूटर पर गेम मत खेलना। आई.टी. सिक्युरिटी मैनुअल में साफ़ मना किया गया है। निजी काम के लिए ऑफ़िस के कम्प्यूटर का इस्तेमाल करना मना है।

स्यान : ब्रो, क्या कोई मानता है आई.टी. सिक्युरिटी मैनुअल को ?

रयान : जो नहीं मानता है वह तुम्हारी तरह एक दिन फँसता है।

स्यान : अब चल, लंच टाइम का सी.सी.टी.वी. फुटेज देखते हैं कि तेरी ग़ैरमौजूदगी में यहाँ क्या क्या हुआ।

(दोनों मित्र सी.सी.टी.वी. देखने लगते है फुटेज में दिखता है कि एक व्यक्ति लंच के समय में स्यान के टेबल के पास आता है, फिर दाएँ बाएँ देखता है किसी को न पाकर आश्वस्त हो जाता है और स्यान के कम्प्यूटर में पेनड्राइव लगा देता है, फिर दनादन प्रिंट-आउट निकालता है।)

रयान : (अत्यंत विस्मय से): अरे यह क्या ? तेरे कम्प्यूटर पर कोई पासवर्ड नहीं लगा है, कोई भी आकर तेरा कम्प्यूटर खोल लेता है ?

स्यान : लगा है, लेकिन भाईचारा भी ज़रूरी है दोस्त ! मैने सभी दोस्तों में पासवर्ड को शेयर कर रखा है।

रयान : भाईचारा जाएगा तेल लेने जब तू फँसेगा। अरे, तेरे डेस्कटॉप को कुछ हुआ, या प्रिंटर को नुकसान हुआ तो इसके लिए तू ज़िम्मेदार होगा न कि कोई और। आई.टी. सिक्युरिटी मैनुअल साफ़-साफ़ कहता है कि जो हार्डवेयर जिस यूजर के सीधे नियंत्रण में है, उसी की ज़िम्मेदारी है। अगर हार्डवेयर में दिक्क्त हुई तो तुम फँसोगे और पकड़े जाओगे।

अपने डेस्कटॉप के आसपास किसी को फटकने भी मत दिया कर। और तूने यह डाटा की हार्ड डिस्क टेबल पर क्या पटक कर रखी है, इसे आलमारी में ताले में हमेशा बंद करके रखा कर। ले मैं तुझे अब आई.टी, सिक्युरिटी मैनुअल पढाता हूँ :

(रयान बाहर जाता है और कुछ क्षण पश्चात एक पुस्तक हाथ में लिए वापस लौटता है। वह पुस्तक को रयान को पढ़ाता है, स्यान बुदबुदाते हुए पढ़ता है)

स्यान: (पढ़ते हुए) कभी किसी को पासवर्ड मत बताओ, बॉस को भी नहीं। फ़ोन, ई-मेल पर भी पासवर्ड मत बताओ।

स्यान: (पुस्तक बंद करते हुए): हे भगवान, मैं इतना ग़लत कर रहा था। इतने दिन अज्ञान में जी रहा था ! भाई काश तुमने यह पुस्तक पहले पढ़ा दी होती तो आज यह सब नहीं होता।

रयान : जब जागो तभी सवेरा !

स्यान : गंजे होने पर कंघी मिले तो किस काम की। अच्छा अब यह बता रैंसमवेयर में फँसा डॉटा कैसे मिलेगा ?

रयान : चल क्रेडिट कार्ड निकाल।

(पर्दा गिरता है।)

नवीकरण के पश्चात ऑडिट भवन

कर्मचारी जीवन सुधार योजना

अजय कुमार शुक्ल

सहायक लेखापरीक्षा अधिकारी

हमारे जीवन का अधिकांशत: हिस्सा कार्यालय में भी गुज़रता है। यदि कार्यालय में कर्मचारियों का जीवन स्तर सुधर जाए तो व्यक्तिगत जीवन पर भी इसका प्रभाव दृष्टि गोचर होगा। इस वर्ष विभाग द्वारा कर्मचारियों के जीवन सुधार हेतु योजना लाई गयी है। योजना में मुफ्त नाश्ता, सिनेमा कक्ष, लाइव मैच का टेलीकास्ट इत्यादि को बिल्कुल शामिल नहीं किया गया है। ऐसे सभी भौतिक साधन सिर्फ क्षणिक सुख देते है और लिप्सा लालसा को तीव्र कर देते है।

न जातु काम: कमाना उपभोगेन शाम्यति
हविषा कृष्ण वर्त्मेव भूम एवाभिवर्धते
-ययाति

जीवन मे वास्तविक सुधार तभी हो सकता है जब कर्मचारी सरलता पूर्वक एवं सुचारू रूप से कार्य संपन्न कर सकें जिसके फलस्वरूप उनके कार्य में सुरुचि उत्पन्न हो सके । घर जाकर आठ बजे के बाद भी लोगो से सामान्य तौर पर बात करने में सक्षम हों और रातें बोझिल न लगें, न ही उन्हें बोझिल रातों को काटने के लिए किसी द्रव की जरूरत हो।

सारांश में, कर्मचारियों के कार्य को सरल बनाना भी जीवन सुधार है। सूचना प्रोद्योगिकी की शक्ति का उपयोग करके दो अनुप्रयोग कर्मचारियों के कार्य – जीवन को सुधारने के लिए इस वर्ष लाये गये हैं।

प्रथम – ओ.आइ.ओ.एस. (वन आई.ए.ए.डी. वन सिस्टम, एक आई. ए. ए. डी. , एक प्रणाली)

द्वितीय – ई-ऑफ़िस ।

इन अनुप्रयोगों से उत्तरदायित्व तथा पारदर्शिता में वृध्दि होगी ।

ओ.आइ.ओ.एस. :- ऑडिट चक्र से संबंधित सभी कार्यो के निष्पादन के लिए इस सॉफ़्टवेयर एप्लिकेशन को विकसित किया जा रहा है । इसमे निम्नवर्णित खंड होंगे:

(1) लेखापरीक्षा प्रक्रिया प्रबंधन तंत्र
(2) लेखापरीक्षित संस्था जगत
(3) लेखापरीक्षा योजना तथा अभिकल्प
(4) लेखापरीक्षा निष्पादन एवं प्रलेखन
(5) लेखापरीक्षा प्रतिवेदन एवं अनुगमन
(6) लेखापरीक्षा ज्ञान प्रबंधन तंत्र
(7) लेखापरीक्षा निदेशन
(8) बंदोबस्त, मानक, निदेशन, नियमावली
(9) लेखापरीक्षा जाँच सूची का कोष
(10) लेखापरीक्षित संस्थाओं की सूचना एवं रूप रेखा
(11) संरचित आँकड़े (वित्तीय एवं परिचालन आँकड़े)
(12) अर्द्ध-संरचित/ असंरचित आँकड़े (सरकारी आदेश/ कार्यालय ज्ञापन/प्रतिवेदन)
(13) आई एफ एम एस, वी एल सी,पी एफ एम एस
(14) सी.ए.जी. वेबसाइट
(15) प्रशासन तंत्र – मानव संसाधन, प्रशिक्षण, परिसंपत्ति, प्रबंधन, बजट व्यय निगरानी

वर्तमान में प्रचलित अन्य अनुप्रयोग यथा आई आर मेन, ऑप्टिमा इत्यादि को अपदस्थ कर दिया जाएगा। यह सभी खुदरा अनुप्रयोग बंद हो जाएगे। सरलता के लिए एकल प्रणाली ही चालू रहेगी।

सिंगल सोर्स ऑफ़ ट्रुथ: वर्तमान में कुछ अनुभाग आंकड़ों को अनुरक्षित (maintain) रखने के लिए कागज़ एवं कम्प्यूटरीकृत, दोनों प्रकार की व्यवस्थाओं का प्रयोग करते हैं। इससे कार्य दोगुना हो जाता है, पुन: शुरू में तो दोनों परस्पर मेल खाते हैं परंतु कालांतर में दोनों प्रकार के आँकड़ो में भिन्नता हो जाती है। इस भिन्नता के कारण का निवारण करना कालांतर में कष्टकर हो जाता है। इस तरह की दोहरी प्रणाली के स्थान पर एकल प्रणाली श्रेयस्कर रहेगी जिससे आंकड़ों में भिन्नता न हो। ओआइओएस इस "सिंगल सोर्स ऑफ़ ट्रुथ" की परिकल्पना को पूर्ण करता है।

ओआईओएस में आँकड़े तत्क्षण अभिलिखित किये जाएंगे न कि बाद में। लेखापरीक्षा की प्रक्रिया के दौरान ही समस्त क्रियाओं एवं आंकड़ों को अभिलिखित किया जाता रहेगा। मुख्यालय कार्यालय तथा स्थानीय कार्यालय में प्रस्तुत किये जाने वाली विवरणिकाओं की आवश्यकता नहीं होगी अत: कर्मचारी मुख्य कार्य की

तरफ़ अधिक ध्यान दे सकते हैं। लेखापरीक्षा की निगरानी तत्क्षण होगी रहेगी जिससे लेखापरीक्षा की गुणवत्ता में वृध्दि होगी। लेखापरीक्षित इकाइयों का ब्यौरा सर्च करने पर तुरंत प्राप्त होगा। इस हेतु धूल धूसरित फ़ाइलों को पलटने की ज़रूरत नहीं होगी।

अन्य एक सुविधा यह भी है: इस एप्लीकेशन में कहीं से भी कार्य संपन्न किया जा सकता है। धवल उज्ज्वल चंद्रशोभित रात्रि की शीतल बयार में छत पर बैठकर भी, और टिनशेड में भी जिस पर बारिश की बूंदे टपटपा कर जलतरंग बजाती हैं, और जब एक-आध आवारा बूंद छटक कर चेहरे पर शीतल बोसा करे, तब एक क्षण बारिश को निहार कर, आँखों को विराम देकर पुन: स्क्रीन पर कार्य में लौटा जा सकता है।

ई-ऑफ़िस: ई- ऑफ़िस एक सुदृढ़ एवं व्यवस्थित प्रणाली है। यह कई वर्षों से कई विभागों में प्रयोग में लाई जा रही है, अतः इसमें आवश्यक सुधार हो चुके हैं। ई-आफिस के कई घटक हैं यथा :-

ई-फ़ाईल, ई-टूर, ई – लीव, स्पैरो इत्यादि। इस वर्ष ई-फ़ाईल और स्पैरो मॉड्यूल ही लागू होगें। ई-फ़ाइल, ई- ऑफ़िस का सबसे अधिक लोकप्रिय घटक है तथा यह अनुप्रयोग भौतिक फ़ाइलों को स्थानापन्न करने में सक्षम है।

ई- ऑफ़िस में फ़ाइलों को तत्क्षण ढूंढा जा सकता है। कार्यालयों में कुछ कर्मचारियों का अधिकांशत: समय फ़ाइलों को ढूढने में व्यतीत हो जाता है, जीवन एक खोज है परंतु इनके जीवन में सिर्फ खोज है, और इस 'लाश तक तलाश' को ई- ऑफ़िस से रोका जा सकता है। कभी-कभी तलाशी तो इंतेहा की हद तक जाती है, पूरी ख़ानातलाशी हो जाती है बस जामातलाशी बच जाती है। इस योजना से ज़हनी और जिस्मानी सुकून मिलेगा।

एक बार एक सज्जन मेरे सम्मुख एक मांगपत्र लेकर उपस्थित हुए। उन्हें मैंने पूर्व में कभी नहीं देखा था, लिहाज़ा मैंने पूछा कि महोदय, आप किस कक्ष में बैठते हैं ? तो उन्होंने बताया कि एक वर्ष से मेरे सामने वाले टेबल पर ही तो बैठ रहे हैं। अब मैं चकराया, ऐसा कैसे संभव था कि कोई महाशय मेरे सामने के टेबल पर एक वर्ष तक बैठते रहे हों और मुझे पता भी नहीं चला। इसका उत्तर स्वयं उन सज्जन ने ही दे दिया। उन्होंने बताया कि उनके पास फ़ाईलों को रखने की जगह नहीं थी, फलस्वरूप उन्होंने अपने टेबल पर ही उन्हें रख दिया, लिहाज़ा उनका भौतिक शरीर उन फ़ाईलों के पीछे छुपा रहता था तथा उन्हें कोई देख नहीं पाता था, लेकिन

हाँ, फ़ाईलों के भंडार के मध्य जो एक सुराख़ था उसकी मदद से वह सामने के व्यक्तियों को देख सकते थे।

दिल तो दूर नज़र भी नहीं मिलती
नज़दीकी दूरी की वजह सही नहीं मिलती
कहाँ कलम रखें कहाँ दवात रखें
भरी टेबल पर जगह कभी नहीं मिलती
ऐसा नहीं है कि लापता है फ़ाइल
बस जहाँ तलाश है वहाँ नहीं मिलती

यह योजना ऐसी दारुण परिस्थितियों को दूर करेगी। अब कर्मचारियों के ऊपर फ़ाईलों के गिरने तथा उनके दबने का खतरा समाप्त हो जाएगा। अत: मित्रों, अब वक़्त ओआइओस तथा ई-ऑफ़िस से डरने या भ्रांतियों में पड़ने का नहीं है, बल्कि इन्हें सीखकर कुशलतापूर्वक कार्य करने का है । कम्प्यूटर से घबराएँ नहीं, इसे अपना मददगार समझें। कम्प्यूटर को सिर्फ़ मनोरंजन का साधन न समझें, बल्कि कार्य का साधन भी बनाएँ ।

पिछले महीने मैं एक कार्यालय में किसी कार्यवश गया था जहाँ ई-ऑफ़िस को लॉकडाउन के समय में स्थापित किया गया था। वहाँ एक कर्मचारी दूसरे से वार्तालाप कर रहा था, "पीटर, पहले मैं ज़िंदगी में बहुत परेशान या लेकिन जब से यह ई-ऑफ़िस आया है, इसने मेरी दुनिया बदल दी है। अब मैं सारे काम आराम से करता हूँ। तुम भी ज़रुर आज़माओ ई-आफिस !! यह कोई टी,वी.का विज्ञापन नहीं था बल्कि यथार्थ था। अगर किसी को ओ.आई.ओ.एस. को समझने में कठिनाई आ रही है, तो स्वयं ओ.आई.ओ.एस. की साईट में एक यूज़र मैनुअल है। यह यूजर मैनुअल ओ.आई.ओ.एस के नॉलेज मैनेजमेंट सिस्टम खण्ड में अपलोड किया गया है। इसमें लेख तथा वीडियो के माध्यम से भलीभांति समझाया गया है कि ओ.आई.ओ.एस. में कैसे कार्य करें।

एक महिला जो ममता की छाँव वाले आँचल को अपनी नाक पर चढ़ा कर, नाक सिकोड़ कर परम पिता परमात्मा से दमा की भेंट न चढने की प्रार्थना करते हुए फ़ाइलें ढूंढा करती थी, आज वह इंटर बटन दबा कर प्रसन्नता पूर्वक कहती है "लो, मिल गयी फ़ाइल"! कार्यालय में दमा के इलाज का एक बिल कम आया। पृथ्वी तत्व से प्रेरित छींकें अब सुनाई नहीं देती है।

ई-ऑफ़िस की कार्य पध्दति :-

1. प्राप्त ई-मेल को डायराईज़ किया जाता है। हार्ड कॉपी में प्राप्त पत्रों को स्कैन करके डायराईज़ किया जाता है।
2. ई-ऑफ़िस के द्वारा प्राप्त आवक (पत्रों) को क्रमांक (क्रम संख्या) दिया जाता है
3. इन प्राप्तियों को संबंधित अधिकारी/ कर्मचारी को प्रेषित किया जाता है, जिनके द्वारा इस आवक को संबंधित फ़ाईल में लगाया जाता है।
4. अगर प्राप्त पत्र हेतु फ़ाइल मौजूद है तो उस फ़ाइल में लगा दिया जाता है। अगर प्राप्त पत्र हेतु फ़ाईल मौजूद नहीं है तो नई फ़ाईल बनानी पड़ती है।
5. इस ई-फाईल को खोलकर नोटिंग, ड्राफ्टिंग, अनुमोदन इत्यादि का कार्य किया जा सकता है
6. फ़ाईल को डिजिटल हस्ताक्षर करके अगले अधिकारी/कर्मचारी को प्रेषित किया जाता है।
7. ई-फाईल को तयशुदा प्रणाली से विभिन्न स्तरों पर प्रस्तुत किया जाता है।
8. लिये गये निर्णय को दर्ज किया जाता है, और/या मसौदे को, पत्र या ई-मेल के माध्यम से प्रेषित किया जाता है।

कुछ लोग यूँ ही बेवजह इन नये अनुप्रयोगों को लेकर अफ़वाह फैला रहे है लेकिन इस फ़िरके को यह अवश्य समझना चाहिए कि सभी का हित सूचना क्रांति के आयामों का लाभ उठाने में ही है। यूँ ही बेसबब कयास करने से अच्छा है कि अच्छे कार्यों में सहयोग दें। इन अनुप्रयोगों से सिर्फ भ्रष्टाचारियों का नुकसान होगा जो कि इन्हें असफल करने के लिए इंतेहा हद तक जायेंगे लेकिन अब जरायम-ओ-ख़यानत के ख़त्म होने का वक्त आ गया है। इस तमाम रद्दोबदल में थोड़ी तकलीफ़ तो होगी, लेकिन फिर से दिन हालात करवट बदलेंगे, और शिकस्ताहाल सिस्टम ज़रुर सुधरेगा।

अब नहीं उठानी होगी शर्मिंदगी

वर्तमान में हर क़िस्म के व्हाट्सअप ग्रुप बन गये हैं। लॉकडाउन में कार्यालय की ओर से भी सूचना प्रसारण एवं समूह-चर्चा के लिए ग्रुप बना लिए गए है। अब वक्तन-फवक्तन दुर्घटनाऍ घट जाती हैं। मिसाल के तौर पर जिस चित्र को साथी रिंदो को बांटना था, वह सोहबत-ए-रिंदाना का चित्र दफ़्तर के ग्रुप में चला जाता

है। ऐसी हालत में कैफ़ियत काफ़ूर हो जाती है। दिल और दूध का फटा वापस मिलता नहीं। ऐसे में कई दिलों में बड़ी शिद्दत से यह आरज़ू थी कि एक ऐसा मंच मिले जहाँ निजी मसलों को सरकारी मसलों से अलग रखा जा सके।

ऐसे संयोगो से बचने के लिए आजकल सभी दफ़्तर अपने –अपने ग्रुपों को सन्देस (Sandes) नामक प्लेटफ़ॉर्म पर बना रहे हैं। सन्देस, नेशनल इन्फ़ॉर्मैटिक्स सेंटर (एन.आई.सी) द्वारा विकसित अनुप्रयोग है जो कि बिल्कुल व्हाट्सअप की तरह है, इसमें विडियो तथा ऑडियो कालिंग भी हो सकती है तथा यह कार्यालयीन कार्यों के लिए अधिक श्रेष्ठ है। संदेस एप्प का सर्वर भारतवर्ष में ही स्थापित है, जिससे विधिक आवश्यकता पड़ने पर उत्तरदायित्व सिध्द हो सकता है तथा यह किसी विदेशी प्राईवेट कंपनी के नियंत्रण में नहीं है बल्कि स्वयं सरकार के अतंर्गत है। लिहाज़ा यह मंच व्हाट्सअप से अधिक आधिकारिक है।

बोपल कालोनी के बाहर विकसित किया गया "अर्बन फॉरेस्ट"

एक नया शहर - एक नया अनुभव

आदित्य पंत

उप महालेखाकार

लगभग एक वर्ष पहले मेरा अहमदाबाद स्थानांतरण हुआ था। समाचारपत्रों में इस शहर में कोरोना के प्रभाव के बारे में पढ़ कर मेरे मन में थोड़ी हिचक और भय था।

यह हिचक शायद केवल कोरोना के कारण नहीं थी- सच कहूँ तो एक नए शहर में जाना, नए लोग, नया काम ... यह सब मेरी विह्वलता के कारण थे। फिर वो दिन आया, जब मैं यहाँ आया, और बहुत जल्द यह सभी धारणाएँ छंटने लगी।

हर बढ़ती घड़ी से यह ज्ञात होता गया कि यह शहर भी तो घर जैसा ही है- हाँ बस मेरे अंदर के भुक्खड़ को कभी-कभी दिल्ली के खाने की याद आती है।

धीरे-धीरे काम और कार्यालय में भी समझ आई- किंतु आज भी मास्क पहने कई सहकर्मियों का आधा चेहरा मेरी कल्पना में ही बना है बस। कभी अवसर मिला तो थोड़ा शहर भी घूमा।

माणेक चौक की चहल-पहल से रिवरफ्रंट के सुकून तक, एल्फा मॉल की चकाचौंध से सी.जी. रोड की चहल-पहल तक, दीपावली की रौनक से जन्माष्टमी की धूम तक...इस शहर की एक अपनी जान है, एक हँसती-खिलखिलाती पहचान है। मैं ज़्यादा गुजराती तो नहीं बोलता, लेकिन आज एक वर्ष बाद कोई मुझसे इस शहर के बारे में कुछ भी पूछे तो मैं कहूँगा- बहु सारू छे!!

साबरमती रिवरफ्रन्ट

तेरे रंग न्यारे

अनिल अहलान

विभागीय लेखाकार

कोई करता नखरे खाने में, कोई बैठा आस में एक दाने की
कोई रहता ऊँचे महलों में, कोई बैठा फुटपाथ के कोने में ।

ईंट उनके सर पर, ईंट उनके हाथों में
ऊँचे महल बनाने वाले, सोते हैं फुटपाथों पे।

कोई मारे लात माँ -बाप को, कोई तरस गया माँ -बाप को
किसी से छिना माँ का आँचल, कोई तरस गया औलाद को ।

कोई तरसे भाई के प्यार को , किसी को बहन का दुलार नहीं
सब मिन्नत करते तेरे आगे, तू सुनता क्यों पुकार नहीं।

कोई देख ना पाया फूलों को, कोई सुन न पाये पंछियों के कलरव को
जो बोल ना पाए एक शब्द भी, वो कैसे बताये मन की हलचल को।

किसी को मज़ा न आये खाने में, कोई बिन खाए सो जाता है
किसी को नींद नहीं मखमल के गद्दों पे, कोई बिन बिस्तर सो जाता है।

होती पूरी हर इच्छा किसी की, वो हर इच्छा को दबाता है
देख के अपने बाप की हालत, वो बच्चा चुप हो जाता है।

कोई रहता दिन भर ए.सी. में, किसी को नसीब ठंडी छाँव नहीं
किसी के दोनों हाथ नहीं, तो किसी के दोनों पांव नहीं।

‘ध्यान’ (Meditation)

अनिल कुमार बेनीवाल

वरिष्ठ लेखापरीक्षा अधिकारी

मेरे इस लेख में मैं ‘ध्यान’ से सम्बंधित मेरा व्यक्तिगत अनुभव साझा करने का प्रयास करूँगा। हालाँकि मेरा यह भी मानना है कि ‘ध्यान’ कोई ऐसी वस्तु या विषय नहीं है जिसे कोई व्यक्ति किसी दूसरे व्यक्ति को समझा पाए, यह तो पूर्णतः व्यक्तिगत अनुभव का ही विषय है, फिर भी प्रयास करने में तो कोई हर्ज़ नहीं है।

मैं एक बहुत ही सरल विषय से चर्चा प्रारम्भ करना चाहूँगा। मेरी नज़र में ‘ध्यान’ की पहली और सबसे महत्वपूर्ण शर्त है- एकाग्रता।‘ध्यान’ तो एकाग्रता की चरम परिणति है। यदि हमें उस चरम तक पहुंचना है तो हमें सतर्क रहना होगा कि हम जो भी कार्य करें, पूर्ण तल्लीनता से करें- चाहे हम चल रहे हों, दौड़ रहे हों, खाना खा रहे हों, संगीत सुन रहे हों, कार्यालय का काम कर रहे हों या घरेलू कार्य व्यवहार। यदि हम अपनी क्रियाओं के प्रति सजग, जागरूक और निष्ठावान नहीं हैं तो किसी भी बिंदु पर स्वयं को केन्द्रित करना कठिन है, शायद असंभव भी। तो ध्यान की ओर अग्रसर होने की पहली और सर्वप्रमुख शर्त है- अपनी दिनचर्या की सभी क्रियाओं के प्रति सजग, निष्ठावान और केन्द्रित होना, अर्थात् प्रत्येक कार्य पूर्ण एकाग्रता से करना। यह तो हुई हमारी प्रारम्भिक तैयारी, अब हम आगे बढ़ सकते हैं।

‘ध्यान’ के स्तर तक पहुँचने के लिए दूसरी आवश्यकता है कि हम देर तक अपने आप को किसी स्थान पर अचल बनाये रखने और अपने श्वास को नियंत्रित करने की क्षमता का विकास करें। यह कैसे होगा? मेरे अनुभव के अनुसार ‘प्राणायाम’ इस क्षमता को विकसित करने का सबसे सरल और सटीक साधन है। मैं पिछले कई सालों से प्राणायाम करता रहा हूँ।शुरूआती दौर में श्वास पर कम और घड़ी पर अधिक ध्यान रहता था। सारा प्रयास यही रहता था कि बस जैसे-तैसे आधा घंटा व्यतीत हो जाए और आत्म संतोष हो जाए कि चलो हो गया आज का प्राणायाम, लेकिन अनवरत अभ्यास से अब यह संभव हो गया है कि एक घंटे का प्राणायाम भी कम मालूम पड़ता है। मन करता है कि बस प्राणायाम चालू ही रखूँ जब तक शरीर आरामदायक अवस्था में रहे एवं किसी प्रकार की कोई कठिनाई महसूस नहीं हो रही हो। मेरा प्राणायाम का क्रम है- अनुलोम-विलोम, कपालभाति, भ्रामरी और ओमकार। इसी क्रम में प्राणायाम करने का प्रयास करें। जहाँ तक संभव हो,

प्राणायाम की पूरी अवधि के दौरान आँखे बंद रखने का प्रयास करें। आँख बंद करने पर हमें असीम शांति का अनुभव होता है। इस प्रकार अभ्यास करते-करते जब हम इस अवस्था में पहुँच जाएँ कि प्राणायाम अब एक बोझ, एक आदत या स्वस्थ बने रहने के लिए एक आवश्यकता न होकर एक आनंद का विषय हो जाए, तब हम 'ध्यान' की ओर बढ़ सकते हैं।

लेकिन यदि हम प्राणायाम से सीधा 'ध्यान' की ओर बढ़ जाते हैं तो मेरे विचार में इस बात का खतरा है कि यह सिर्फ़ एक और शारीरिक अभ्यास ही सिद्ध होगा।अतः आवश्यकता इस बात की है कि हमारे पास 'ध्यान' की ओर अग्रसर होने की एक प्रेरणा भी हो। यह प्रेरणा हमें 'एक परम सत्ता के अस्तित्व' पर विश्वास और सदगुरुओं के प्रवचनों से मिल सकती है अर्थात् आध्यात्म की ओर झुकाव 'ध्यान' के लिए बहुत लाभप्रद है।

मेरा व्यक्तिगत अनुभव यह है कि जब भी मैं 'ध्यान' में बैठता हूँ, मेरा अस्तित्व तीन हिस्सों में बँट जाता है। एक हूँ 'मैं', दूसरी मेरी 'बुद्धि' जो हमेशा कहती है- यह क्या नाटक है? क्या होगा 'ध्यान' से? यह सिर्फ समय की बर्बादी है और तीसरा है मेरा 'मन' जिसे इस बात से कोई फर्क ही नहीं पड़ता कि मैं 'ध्यान' साधने के प्रयास में हूँ, वह तो स्वच्छंद होकर एक विचार से दूसरे विचार, एक कल्पना से दूसरी कल्पना तक दौड़ता रहता है।तो अब हमारे सामने हमारी 'बुद्धि' और हमारे 'मन' को नियंत्रित करने की चुनौती है।

जहाँ तक 'बुद्धि' का प्रश्न है, यदि हम बुद्धि का विरोध करने की कोशिश करेंगे तो बुद्धि अपने तर्क और कुतर्क रुपी बाणों से हमें क्षत-विक्षत कर देगी और हमारी हार निश्चित है।अतः हमारे पास एक ही चारा है कि हम बुद्धि के समक्ष समर्पण कर दें और कहें कि जो तुम कह रही हो उसका मेरे पास कोई उत्तर नहीं है। इस तरह बुद्धि के अहम् की तुष्टि हो जाएगी और हमारा मार्ग आसान हो जायेगा।

'मन' को शांत करने का मार्ग सुझाने के लिए मै एक उदाहरण प्रस्तुत करना चाहूँगा। जब मैं गाँव में था तो अपनी भैंसों को जोहड़ (तालाब) में स्नान के लिए ले जाता था। सभी भैंसें अपनी ज़ंजीरों से मुक्त होती थीं लेकिन भैंस का बच्चा (अर्थात् बछड़ा जिसे अपनी भाषा में हम 'पाड़ा' कहते है) बहुत चंचल होता है और उसे ज़ंजीर से बांधे रखना आवश्यक होता है।यदि ऐसा न किया जाए तो हो सकता है कि वह भागना शुरू कर दे और उसके पीछे उसकी माँ और बाकी दूसरी भैंसें भी भागना शुरू कर दें और गाँव की गलियों में एक उपद्रव खड़ा हो जाए। ऐसा भी हो सकता है कि वह स्वयं को या किसी राहगीर को चोटिल कर दे। लेकिन जब तक हम पाड़े

को ज़ंजीर से साधने का प्रयास करते रहेंगे, वह विरोध ज़ारी रखेगा और आज़ाद होने का प्रयास करता रहेगा, लेकिन मैंने ऐसा पाया है कि यदि मैं ज़ंजीर को संभाले रखने में नाकामयाब रहता तो पाड़ा कुछ दूर भाग कर, उत्पात मचाकर शांत हो जाता था और अपनी माँ के पास लौट आता था।

मेरे विचार में ठीक यही स्थिति मन की है। जितना हम इसे संयमित करने, साधने का प्रयास करेंगे, यह उतना ही व्याकुल होकर इधर-उधर भटकने का प्रयास करेगा, लेकिन यदि हम मन को आज़ाद छोड़ दें और इसे अनुमति दे दें कि यह जहाँ चाहे वहां जा सकता है तो हम पाएंगे कि थोड़ी देर में मन की दुविधा समाप्त हो गयी है और इसका 'मैं' के साथ तादात्म्य स्थापित हो गया है। यह ठीक वैसे ही है जैसे कोई

पेंडुलम अपनी ऊर्जा समाप्त होने पर अपने पथ के केंद्र पर स्थिर हो जाता है क्योकि अंत में केंद्र के अलावा किसी दूसरे बिंदु पर स्थिर होने की कोई सम्भावना ही नहीं है। इस प्रकार, जब हम अपनी'बुद्धि' और'मन' को संयमित करने में सफलता पा लेंगे तो 'ध्यान' की ओर अग्रसर हुआ जा सकता है।

मेरा मानना है कि प्राणायाम के तुरंत बाद का समय 'ध्यान' साधना के लिए सबसे उपयुक्त है। इस हेतु आप सुबह पांच/ साढ़े पांच के आसपास उठ जाएँ क्योंकि जितना आप देर से उठेंगे, उतना ही आप का रुझान कार्यालय की ओर होगा क्योंकि कार्यालय भी समय पर पहुंचना है (है ना?) और 'ध्यान साधना' मुश्किल होगी। और जल्दी उठने के लिए जल्दी सोना भी आवश्यक है! ध्यान' के लिए आप ज़मीन पर एक आसन बिछाएं और सीधी कमर रखते हुए 'शिव' मुद्रा या 'बुद्ध' मुद्रा (जो भी आरामदायक महसूस हो) में बैठकर आँखें बंद कर लें। 'बुद्धि' और'मन' को मुक्त छोड़ दें अर्थात् इन्हें जो तर्क/ कुतर्क करने हों, जहाँ विचरना हो, उन्हें उसकी

आज़ादी दे दें।'ध्यान' के शुरुआती दिनों में आप 'यू-ट्यूब' पर उपलब्ध 'ध्यान' वीडियोज़ का सहारा ले सकते हैं जैसे- 'ॐ' या ' बुद्धं शरणं गच्छामिः।।' मन्त्र का उच्चारण। जब आप इन पवित्र मंत्रों पर अपने आप को केन्द्रित करेंगे तो धीरे-धीरे आप 'ध्यान' की अवस्था की ओर अग्रसर होंगे। कुछ दिनों के अभ्यास

के बाद आप महसूस करेंगे कि आसन में बैठने के कुछ ही मिनटों में आप का मन और बुद्धि शांत हो गए हैं और जिस भी मन्त्र का उच्चारण आप सुन रहे हैं वह पार्श्व में कहीं खो गया है अर्थात् मन्त्र उच्चारण हो रहा है या नहीं, उससे कोई फ़र्क नहीं पड़ता। 'ध्यान' की अवस्था में आप का शरीर और श्वास शिथिल हो जाते है, आप एकदम हल्का महसूस करते हैं। इस अवस्था में पहुँचने पर परम शांति का अनुभव होता है, जिसे केवल अनुभव किया जा सकता है, समझाया नहीं जा सकता। मेरे ध्यान करने का एकमात्र उद्देश्य इसी परम शांति को अनुभव करना है।

अब प्रश्न उठ सकता है कि 'ध्यान' कितनी देर किया जाए। यदि हम 'ध्यान' को समय मर्यादा में बाँधने का प्रयास करते हैं तो हम यांत्रिक क्रिया की ओर अग्रसर हो रहे हैं,न कि परम शांति की ओर। 'ध्यान' की समयावधि इस बात पर निर्भर करती है कि आप कितनी देर तक स्वयं को आरामदायक अवस्था में पाते हैं। यह अवधि पाँच मिनट भी हो सकती है और पाँच घंटे भी। वास्तविक लक्ष्य तो परम शांति को महसूस करना है। आशा करता हूँ कि मेरा यह लेख आपको 'ध्यान' के लिए प्रेरित और तैयार करेगा।बहुत-बहुत शुभकामनायें।

बोपल कॉलोनी में वृक्षारोपण करते कार्यालय के सदस्य

हमारी दहेगाम यात्रा

अमन दीप

बहुकार्य कर्मचारी

बात तब की है जब मैं कार्यालय में नया-नया नियुक्त हुआ था। 9 जुलाई, 2019 को मुझे एवं मेरे कुछ सहकर्मियों को रक्षा शक्ति यूनिवर्सिटी में प्रशिक्षण के लिए नामित किया गया। हमें आदेश की प्रति प्रेषित कर दी गई। उस समय मुझे अहमदाबाद में रहते हुए एक वर्ष भी नहीं हुआ था। मन में कई आशंकायें उठने लगीं-कहाँ होगी यूनिवर्सिटी, कैसे जायेंगे, कब निकलना सही होगा, समय से पहुंचना भी हो पायेगा या नहीं आदि, परन्तु उस आदेश में कुछ साथी मेरे बैच के ही थे तो हम सभी ने मंत्रणा की और सभी पहलुओं को ध्यान में रखते हुए एकमत से यह निर्णय हुआ कि हम आठ साथी मोटरसाइकिल से वहां का रास्ता तय करेंगे। मोटरसाइकिल से जाने के निर्णय में हमारी गुजरात दर्शन की मंशा छिपी हुई थी, साथ ही साथ अपनी सवारी होने से कई अन्य सुविधाएँ भी प्राप्त हो जाती हैं। 11 जुलाई, 2019 से 12 जुलाई, 2019 तक हमें वहां प्रशिक्षण प्राप्त करना था। हम सभी ने निर्णय लिया कि पहले सभी मेरे निवास पर इकठ्ठे होंगे और फिर आगे जायेंगे।

11 जुलाई को सुबह 6.00 बजे सभी दोस्त मेरे निवास पर पहुंचे एवं हमने यात्रा आरम्भ की। आधे घंटे यात्रा के बाद हम सुबह के जलपान के लिये रुके। सुबह के कारण रास्तों पर यातायात कम था और नवोदित सूर्य की लालिमा हमारा स्वागत कर रही थी। हमें अपनी यात्रा काफी मज़ेदार लग रही थी। जलपान में हम सभी ने पोहा खाया और अपनी मंज़िल की तरफ़ बढ़ चले। अहमदाबाद शहर के आगे बढ़ते ही मैंने गुजरात का एक नया स्वरुप देखा या यूँ कहें कि अनदेखा स्वरुप देखा। अब तक हमने गुजरात के अहमदाबाद शहर को ही देखा था तो मन में गुजरात की अट्टालिकाओं और चौड़ी सड़कों वाली छवि ही थी परन्तु यह गुजरात मेरे लिए सर्वथा नवीन था। सड़क के दोनों तरफ हरे-भरे खेत, खेतों में काम करते किसान, पंख फैलाकर नाचते मोर और प्रदूषण मुक्त वातावरण। भारत की आत्मा गांवों में बसती है, यह बात गुजरात के परिप्रेक्ष्य में मुझे तभी सत्य प्रतीत हुई।

लगभग 50 किलोमीटर की यात्रा करके हम सभी गांधीनगर जिले के दहेगाम के निकट लापड़ ग्राम में स्थित रक्षा शक्ति यूनिवर्सिटी पहुंचे। हम सभी ने समय का ख्याल रखा था अतः हमें देर नहीं हुई।

रक्षा शक्ति यूनिवर्सिटी की स्थापना 2009 में की गई थी एवं राष्ट्रीय सुरक्षा को सर्वोपरि रखना ही इसका उद्देश्य है। यह यूनिवर्सिटी 250 एकड़ क्षेत्र में फैली हुई है। वहां पहुंचकर हमने एक शिक्षक के कहने पर एक कक्ष में अपना-अपना स्थान ग्रहण किया। सर्वप्रथम एक प्रशिक्षक ने हम सभी का परिचय पूछा, तत्पश्चात हमें अपने संस्थान और हमारे प्रशिक्षण के बारे में बताया। हमारा पहला प्रशिक्षण प्राथमिक चिकित्सा से सम्बंधित था। इसी प्रकार दूसरे प्रशिक्षक ने भी साइबर क्राइम से सम्बंधित जानकारियाँ दीं एवं फायर से सम्बंधित प्रशिक्षण प्रदान किया। भोजनावकाश में हमारे भोजन का प्रबंध भी उन्हीं की तरफ़ से किया गया था। दो दिनों तक हमने कई प्रकार के प्रशिक्षण प्राप्त किये। वहां के प्रशिक्षकों ने हमें सलाह दी कि हम अपने अधिकारियों से आग्रह करें कि अगली बार प्रशिक्षण की अवधि थोड़ी अधिक रखें ताकि प्रशिक्षुओं को अधिकाधिक प्रशिक्षण मिल सके। प्रशिक्षण पाने के पश्चात् सभी ने एक नए आत्मविश्वास का अनुभव किया और कई ज़रुरी

जानकारियों से अवगत हुए। किये। इस प्रकार के प्रशिक्षण दिलाने के लिए मैं अपने ऑफिस का धन्यवाद करता हूँ और मेरी यह राय हैं कि इस तरह के ज़रुरी प्रशिक्षण अधिकाधिक दिए जाने चाहिए ताकि ज्यादा से ज्यादा कर्मचारी लाभान्वित हों सकें।

प्रधान महालेखाकार तथा प्रधान निदेशक कार्यालयों के प्रमुख तथा हिन्दी अधिकारी नगर राजभाषा कार्यान्वियन समिति की बैठक में हिन्दी में उत्कृष्ट कार्य हेतु प्रमाणपत्र प्राप्त करते हुए

जीवन की साँझ

एम. श्रीनिवास राव

सहायक पर्यवेक्षक

वे मेरे उच्च विद्यालय के दिन थे। गाँव में मेरा सहपाठी था जिसके माता-पिता दोनों सरकारी कर्मचारी थे इसलिए उनकी जीवन शैली हम से उच्चस्तरीय थी। ख़ुद का बड़ा दो मंज़िला मकान और एक बजाज स्कूटर था। मेरे दोस्त की एक बहन भी थी। उनके परिवार में सब बहुत अच्छे थे और किसी को थोड़ा सा भी घमंड नहीं था जिसके कारण हम लोग अक्सर उनके घर जाते थे। दसवीं कक्षा से मेरे दोस्त की पढ़ाई बाहर शहरों में होने लगी और मेरी पढ़ाई अपने गाँव में ही। बीच-बीच में छुट्टियों में मेरा दोस्त आता था, हम लोग मिलते थे और काफ़ी समय अन्य दोस्तों के साथ गुज़ारते थे। धीरे-धीरे हम अपने अपने जीवन में व्यस्त होते गए मगर साल में एक-दो बार ज़रूर मिलते थे। बी.एस.सी. के बाद मेरा दोस्त एक कंप्यूटर कोर्स करके लंदन चला गया जहाँ उसकी बड़ी बहन रहती थी। कुछ साल बाद मैं भी अपनी नौकरी की वजह से गुजरात आ गया। बाद में हम दोनों का मिलना लगभग बंद हो गया मगर 'सोशल मीडिया' पर हम संपर्क में थे।

कुछ समय पहले मैं अपने गाँव गया तो अपने अन्य दोस्तों से इस दोस्त के माता-पिता के बारे पूछने पर पता चला है कि मेरा दोस्त और उसकी बहन लंदन में बस गए हैं। उनके माता-पिता गाँव में ही हैं और दोनों शय्याग्रस्त हैं। एक नर्स और एक घरेलू सहायक उनकी देखरेभाल करते हैं। मैं जाकर उन दोनों को मिला। यह सोच कर मेरे आँसू रुक नहीं पाए कि एक ज़माने में वो कैसे थे, अब कैसे हैं। इस प्रश्न के उत्तर के लिए मैंने अपने दोस्त को दूरभाष से संपर्क किया, तो उसने बताया कि उसने माता-पिता को लंदन ले जाने की बहुत कोशिश की थी मगर वे बिलकुल सहमत नहीं हुए। वे वहाँ नहीं रह पाएंगे, अपने ही घर में रहेंगे, ऐसी ज़िद करके बैठे थे। आखिर ऐसा हो गया कि मैं मेरी नौकरी छोड़कर गाँव नहीं आ सकता था और वे लंदन नहीं आये। कई वर्ष बीत गए, अब बुढ़ापे में माँ-बाप शय्याग्रस्त हो गए हैं। मैं आया था, एक अस्पताल में दोनों को दाखिल किया। अस्पताल में हर महीने पैसे भेजता हूँ और वो लोग एक नर्स और एक घरेलू सहायक की सहायता से मेरे माता-पिता की देखभाल कर रहे हैं।

उसके बाद से मैंने इस विषय पर मेरे दोस्त से कोई बात नहीं की क्योंकि मेरे मन ने मुझे रोक लिया कि उसकी बात सुनकर और दुख होगा। ऐसी ही स्थिति मेरे कई अन्य दोस्तों की भी है, माता-पिता गाँव में हैं और बच्चे विदेश में।

मेरे मन में हमेशा एक प्रश्न खड़ा हो जाता है कि किसकी गलती थी। सब लोग अपनी-अपनी जगह पर सही लगते हैं। मगर कहीं तो कुछ गड़बड़ हो रही है। बचपन से लेकर अभी तक हमारे लिए उन्होंने पूरी ज़िन्दगी प्रयास किए। क्या हमें उनके जीवन के अंतिम चरण में उनके साथ रहने की कोशिश नहीं करनी चाहिए। माँ- बाप का आप पर बहुत ऋण है जिस का क्या कुछ हिस्सा भी आप नहीं चुकाएंगे? मेरा मत है, 'ज़रुर चुकाना चाहिए'। माता-पिता को भी मेरी सलाह है कि एक बार अपने बच्चों के साथ जाकर रहने की कोशिश तो करें।

मेरा निष्कर्ष यह है कि माता-पिता अपने बच्चों को अच्छी ज़िन्दगी, शिक्षा देकर विदेश भेज सकते हैं। बच्चों को विदेश जाने से पहले यह निर्णय ज़रुर करके जाना चाहिए कि वे जाएँ, पाँच-दस साल वहां रहें और वापस आएं। यहाँ पर नौकरी ज़रुर मिलेगी। इसी प्रकार की परिस्थिति में मेरे एक परिचित के पुत्र ने अपने वृद्ध माता-पिता के साथ रहने के लिए अपनी विदेश की नौकरी छोड़ने का निर्णय लिया और अहमदाबाद लौट आया। माता-पिता के साथ उनके जीवन की साँझ में ख़ुशी से रहिये, उनका स्वास्थ्य और जीवनकाल ऐसे ही बढ़ जाएगा। बुजुर्ग माता-पिता छोटे बच्चे की तरह हैं, वे तंग करेंगे, मगर हमें सहन करना पड़ेगा जैसे अपने बचपन में वे हमें सहन करते थे।

"माता-पिता से बढ़कर पवित्र प्रेम किसी और का नहीं और माता-पिता की सेवा से बढ़कर कुछ और नहीं।"

मजनू का टीला

गौरव वर्मा

सहायक लेखापरीक्षा अधिकारी

मैं आपको दिल्ली में बसे अपने गृहक्षेत्र 'मजनू का टीला' के बारे में कुछ ख़ास बातें बताना चाहता हूँ । इसके नाम से ही सबसे पहले यह बात आती है कि यह नाम कैसे पड़ा ।

मान्यताओं के अनुसार यहाँ नदी के किनारे ऊँचे टीले पर अब्दुल्ला नाम का एक फ़क़ीर रहा करता था, जो हमेशा इश्वर की भक्ति में लीन रहा करता था। ख़ाली समय में वह नदी में फेरी लगाकर लोगों को निःशुल्क नदी पार कराया करता था। इस वजह से वहाँ लोग उसे मजनू कहा करते थे ।

सन् 1505 में सिखों के प्रथम गुरु श्री गुरु नानक देव जी अपनी यात्रा के दौरान इस स्थान पर तीन दिन के लिए रुके थे । सिख गुरु मजनू की भक्ति ओर उदारता से बहुत प्रभावित हुए और कहा कि यह स्थान इस फ़क़ीर बाबा के नाम से जाना जायेगा । तब से इस जगह का नाम मजनू का टीला पड़ गया।

बाद में सिख मिलिटरी लीडर बघेल सिंह ने 1783 में यहाँ गुरूद्वारे का निर्माण कराया जो कि 'मजनू का टीला गुरुद्वारा' नाम से जाना जाता है । यह गुरुद्वारा राजधानी दिल्ली का सबसे प्राचीन गुरुद्वारा है ।

इस क्षेत्र की भौगोलिक स्थिति की बात करें तो यह दिल्ली के उत्तर में राष्ट्रीय राजमार्ग – एक पर बसा है, इसके पूर्व में यमुना नदी बहती है ओर पश्चिम में यह एक रिज क्षेत्र से घिरा है जो कि अरावली पर्वत श्रेणी का हिस्सा है । एक तरफ दिल्ली विधानसभा तो दूसरी ओर दिल्ली विश्वविद्यालय का कैंपस है।

सन् 1960 में तिब्बत से आये शरणार्थियों को यहीं यमुना नदी के किनारे ज़मीन दी गयी थी। इस जगह को आज के समय में तिब्बती लोगो की दूसरी पीढ़ी का घर माना जाता है। इस जगह को 'लिटिल तिब्बत' या 'मिनी तिब्बत' भी कहा जाता है। यहाँ पर कई जगह बौद्ध मठ भी देखने को मिलते हैं।

तिब्बत से आये शरणार्थियों ने यहाँ काफ़ी चायनीज़ और तिब्बती फ़ूड के रेस्तरां खोल दिए हैं। आज के समय में यह जगह पूरी दिल्ली में चायनीज़ और तिब्बती फ़ूड के लिए बहुत ही प्रसिद्ध है। दूर-दूर से लोग यहाँ खाने का मज़ा लेने और सर्दियों में गर्म कपड़ों की खरीदारी करने आते हैं।

स्वतंत्रता दिवस की पूर्व संध्या पर तिरंगी रोशनी से सजा ऑडिट भवन

काश ! ऐसा हो

चारू गोयल

सहायक लेखापरीक्षा अधिकारी

काश ! लड़के- लड़की का भेद ख़त्म हो जाए
तो शायद ! तो शायद ये सोचकर कि कितनी हसीन है ये दुनिया
ऊपर वाले का भी मन बदल जाए ।

जो रौंद रहे थे सदियों से हम, कुदरत को
क्योंकि वो माँ है तो उसने मौका दिया है,
घर में बैठकर सोचने को मजबूर किया है ।

कि सोचा न था एक दिन दफ़नाने को
शमशान कम पड़ जायेगा,
कि अरबों की इस दुनिया में
वो चार अपने और एक आशियाना ही काम आएगा ।

कि कोहराम को शांत करने
गर भगवान आए भी किसी रूप में
तो ये इन्सान ही पत्थर बरसायेगा ।

कि सोचा न था अर्थी को कन्धा कम पड़ जाएगा
और इन्सान ही इन्सान से खौफ़ खायेगा ।

कि याद कर जब जानवरों को पिंजरे में बांधा था
कि जब जंगलों के बढ़ते क़दमों को काटा था,
कि जब नदियों के रस्ते बदल दिए थे
और तो और दरिंदगी के सारे पैमाने तोड़ दिए थे ।

बस ये वैसा ही एहसास शायद कुदरत ने हमें करवाया है
कि आगे बढ़ पर ईमान से, सब यहीं रह जाएगा
याद रख माटी का बना है, न जाने कब माटी में मिल जाएगा ।

ऊपर वाले पर भरोसा है
पर जैसे गुज़र रहा है ये साल
क्या करें, मन का आलम कुछ ऐसा है ।

कि 'भरोसे' का हर हर्फ़ हँसता है
और इतरा के पूछ रहा है
कि सच में ! अभी भी ! ऐतबार रखता है !

कभी-कभी ताराज बहुत नजदीक़ मालूम पड़ता है
फिर सोचती हूँ तो लगता है

इस तबाही से पहले
काश! वो जो बेपनाह मोहब्बत करते हैं, मिल जाएं
जात, मज़हब, दंगे सब पीछे हट जाएं ।

काश! बच्चे बूढ़े माँ-बाप को समझ पाएं
आला बनने की इस चूहा दौड़ में
किसी बच्चे के ख़्वाब न बिखर जाएं ।

काश! वो अनसुलझे झगड़े सुलझ जाएं
वो ग़लतफहमियों का कोहरा छंट जाएं
और प्यार, दोस्ती, रिश्तों की धूप फिर निकल आए ।

काश! वो पिंजरे में बंद पंछी भी उड़ने पाए
वो बिगड़े रिश्ते इन्सान के, कुदरत से सुधर जाएँ।

पर ज़रुरी नहीं रुकना

चिंटू गुप्ता

लेखा परीक्षक

जीवन, घटनाओं से भरा जो अक्सर हमें तोड़तीं
हालात हमें कमज़ोर बनाते जाते
टूटना किसी का
मानो फूल का डाली से बिछड़ जाना
दुख के मँडराते बादलों से बूंदें गिरेंगीं ही
समय अपने वेग से दौड़ेगा ही

टूटा मन हमें व्यथित करेगा ही
पर ज़रूरी नहीं रुकना ।
हमें समय के साथ चलना है
एक नया सवेरा खोजना है

हम भूल नहीं सकते अपना टूटना
संभल सकते हैं
समस्या है तो हल भी है
जीवन निर्बाध नहीं
रास्ते काँटों भरे हैं
पर ज़रूरी नहीं रुकना ।

ब्रह्माण्ड का उद्भव

नरेंद्र प्रताप

वरिष्ठ लेखाकार

ब्रह्माण्ड का उद्भव कैसे हुआ? इसके विषय में हज़ारों सालों से चिंतन-मनन होता आया है। अलग अलग दार्शनिको ने अपने अपने मतों का प्रतिपादन किया है। विज्ञान भी लगातार इसकी खोज में लगा हुआ है। विज्ञान ने इसके संबंध में जो भी सिद्धांत बताए हैं उनमें सर्वाधिक मान्य बिग-बैंग थ्योरी है, जिसका विस्तार से उल्लेख मैं नहीं करना चाहता। मेरा यह लेख लिखने का उद्देश्य सिर्फ इस सम्भावना पर प्रकाश डालना है कि ब्रह्मांड की उत्पत्ति क्यों और कैसे हुई होगी। मेरे अनुसार ब्रह्मांड की उत्पति के मूल में विज्ञान के ये दो सार्वभौमिक नियम हैं।

(1) न्यूटन का उर्जा संबंधी नियम जिसके अनुसार ऊर्जा को न तो उत्पन्न किया जा सकता है और न ही नष्ट। बस ऊर्जा का एक रूप से दूसरे रूप में रूपांतरण हो सकता है।

(2) आइन्स्टीन का ऊर्जा-द्रव्यमान संबंधी नियम जिसके अनुसार उर्जा का द्रव्य में और द्रव्य का उर्जा में परिवर्तन संभव है। इसका समीकरण है।

$$E=MC^2$$

शुरुआत में कुछ नहीं था सिवाय (गतिमान) समय, आकाश (रिक्त स्थान), निश्चित मात्रा में उर्जा (वात रूप में) और एक ब्लैक होल के। इस ब्लैक होल ने अपनी परास में आने वाली उस वात रूपी ऊर्जा को भी अपने अंदर निगल लिया था जिसके कारण आकाश में सिर्फ़ निर्वात और अँधेरा ही अँधेरा रह गया था।

अब यहाँ से ब्रह्मांड की उत्पति क्यों हुई, इस प्रश्न का उत्तर मिलना शुरू होता है। ब्रह्मांड की उत्पति के पीछे जो मौलिक सिद्धांत है वो है स्थायित्व का अभाव । इस संसार में स्थायित्व का अभाव है। यहाँ कुछ भी स्थायी नहीं है। प्रत्येक वस्तु स्थायित्व प्राप्त करना चाहती है। इस कारण उसमें सदैव कुछ न कुछ परिवर्तन होता रहता

है। इस परिवर्तन का मूल आधार है समय। या फिर यूँ कहें कि समय की गति वास्तविक कारण है। पर कैसे? आइए देखते हैं।

जब भी समय चलता है तो अपने साथ प्रत्येक क्षण, प्रत्येक जगह तथा प्रत्येक वस्तु में कुछ न कुछ परिवर्तन करते चलता है। यानि कि गतिमान समय ही समस्त परिवर्तनों का मूल कारण है। जिसके पीछे स्थायित्व के अभाव का सिद्धांत कार्य करता है। दूसरी बात, गतिमान समय के कारण जो परिवर्तन होता है वो दो रूपों में संभव हो पाता है। पहला विनाश दूसरा विकास। विनाश-विकास का यह क्रम निरंतर चलता रहता है। यहां जो विकास होता है वह इसमें छिपी एक नवसृजन की शक्ति के कारण होता है। अर्थात, परिवर्तन में कुछ न कुछ नवसृजन करने की शक्ति विद्यमान रहती है, जिसके द्वारा ही परिवर्तन विकास को संभव बना पाता है। अब यहाँ से हम ब्रह्मांड की उत्पत्ति के मौलिक सिद्धांत के बहुत करीब पहुँच चुके हैं जो इस प्रकार है।

न्यूटन के ऊर्जा संरक्षण के नियम के आधार पर स्थायित्व के अभाव के सिद्धांत के अनुसार गतिमान समय द्वारा होने वाले परिवर्तन में छिपी नवसृजन शक्ति के कारण ब्लैक होल में समाई हुई उर्जा का ही एक अंडाकार पिंड रूपी द्रव्य में विकास (नवसृजन) हुआ। अर्थात, जिस वात रूपी उर्जा को ब्लैक होल ने अपने अंदर निगल लिया था उसी को अपशिष्ट के रूप में एक अंडाकार पिंड को ब्लैक होल ने अपनी परास से बाहर फेंका। यह सब आइन्स्टीन के ऊर्जा-द्रव्यमान नियम ($E=MC^2$) के अनुसार ही संभव हो पाया। इसी अंडाकार पिंड को ब्रह्मांड की संज्ञा दी गई। आगे चलकर इसी पिंड से असंख्य गेलेक्सियों का निर्माण हुआ। इनका निर्माण भी स्थायित्व के अभाव के सिद्धांत के आधार पर ही हुआ जो इस प्रकार है: गतिमान समय के कारण होने वाले वाले परिवर्तन के कारण इस अंडाकार पिंड में एक महाविस्फोट की घटना हुई । इसे ही बिग- बैंग थ्योरी के नाम से जाना जाता है। आइंस्टीन के ऊर्जा-द्रव्यमान संबंध के नियमानुसार हुए इस विस्फोट में जो द्रव्यमान क्षति हुई, उसके कारण अथाह उर्जा निकली तथा इस अंडाकार पिंड के अरबों टुकड़ों से असंख्य गैलेक्सियां अस्तित्व में आईं ।

जी ले बन्दे

निहारिका उप्पल

वरिष्ठ लेखाकार

जब तक चलेंगी सांसें ये तेरी,
क्या दिन रात यूँ ही तू फ़िक्र करेगा ?
कहीं मेरे होते न कोई कमी हो,
क्या अपनों की चाहत में हर पल मरेगा ?

जब अपनों का इक-इक है फ़र्ज़ निभाया,
क्या अपने लिए भी तू कुछ करेगा ?
व्यस्त से जीवन से कुछ पल चुराकर,
क्या अपने लिए भी तू लड़ेगा ?

जब पूछेगा कोई तेरा क्या है अपना,
क्या ह्रदय से कोई उत्तर आएगा?
जो इतना बनाया है तूने जहाँ में,
क्या इसमें से कुछ तेरे साथ जाएगा?

जब जीने के पल थे तेरे ये मानव,
क्या कोई भी अपनी ख़्वाहिश की पूरी?
और मिल जाये, बस और मिल जाये,
क्या ये ही था जीवन में करना ज़रुरी ?

जब अपनों को बेहतर आज दिया है,
क्या कल को भी उनके तू बेहतर करेगा?
न जाने ये जीवन कितना लिखा है,
क्या सांसों का फिर भी ऐतबार करेगा ?
कब आखिरी हो साँस ये भी पता ना,

क्या फिर भी ये वक़्त यूँ ज़ाया करेगा?
सिकंदर भी छोड़ गया जब ख़जाना,
तो इन भंडारों का तू क्या करेगा?

ये जीवन है छोटा, भरोसा नहीं है,
क्या ये जान के भी नावाकिफ़ रहेगा?
ख़्वाहिशों को अपनी भी चल कर ले पूरी,
क्या इक काम बन्दे तू ये भी करेगा?

हिन्दी पखवाड़े के उद्घाटन समारोह में कार्यालय अध्यक्षों के साथ दीप प्रज्ज्वलित करते मुख्य अतिथि डॉ आलोक गुप्ता

हिन्दी पखवाड़े के समापन समारोह में प्रधान महालेखाकार के साथ दीप प्रज्ज्वलित करतीं मुख्य अतिथि श्रीमती निशि गर्ग

बस ! हिम्मत न हार

नंदिनी गर्ग

सहायक लेखा अधिकारी

माना कि तू अंदर से टूटा हुआ है
अपनों के ही द्वारा लूटा हुआ है,
उठ, दिखा हौसला और ख़ुद को पुकार
कुछ भी कर बस, हिम्मत न हार ।

माना कि मंज़िलें अभी थोड़ी दूर हैं
रुक मत, चलता जा और याद रख,
बहती नदियों ने कभी नहीं पूछा
कि समुद्र कितनी दूर है ।
उठा शमशीर और चट्टानों को दे ललकार,
कुछ भी कर बस, हिम्मत न हार ।

मुसीबतें तो आयेंगी ही, तेरा हौसला आज़माने को
लहरें भी कहेंगी कश्तियों से, किनारे पे लौट जाने को,
कर सामना लहरों का और ख़ुद को पुकार
कुछ भी कर बस, हिम्मत न हार ।

रख बुलंद हौसलों को वो मंज़र भी आएगा
मिलेंगी मंज़िलें भी और मिलने का मज़ा भी आएगा,
बस ओढ़ के रख चादर हौसलों की,
दिक्कतें चाहे आएं हज़ार ।
कुछ भी कर बस, हिम्मत न हार ।
कुछ भी कर बस, हिम्मत न हार ।

ख़ुदा की नेमत

पल्लवी यादव
विभागीय लेखाकार

ख़ुदा की नेमत
कर्मों का करम,
ख़ुशकिस्मती ऐसी, पाया तुझसे जन्म।
जीवन है उर्जा से भरपूर
निराशा रूपी अंधकार कर मन से तू दूर।

ज्ञान का भंडार
वात्सल्य सभी के लिए अपार।
चेहरे पर प्यारी सी मुस्कान
कैसे हो सकता है कोई इतना महान।

जीवन का फ़लसफ़ा
छिपा है तेरी हर बात में
दे पायें हर ख़ुशी
मिल जाए जन्नत इसी जहान में।

ओणम-सद्या का आनंद उठाते हुए

पिता की महानता

बिनय कुमार

बहु कार्य कर्मचारी

वो कंधे पे बिठा के मेला दिखाना,
कभी घोड़ा गाड़ी तो कभी तारा माची की सैर कराना,
मैं नहीं भूलूंगा आपका यूं दिल को छू जाना ।

गलती होने पर डांटना, उसके बाद खिलौने देकर फुसलाना,
और फिर प्यार से समझाना,
मैं नहीं भूलूंगा आपका यूं दिल को छू जाना।

हमें मुसीबत में देख कर आपका घबराना,
चोट लगने पर, ज़्यादा नहीं लगी है कह कर ढांढस बंधवाना,
और थोड़ी ही देर में डॉक्टर से मरहम-पट्टी करवाना,
मैं नहीं भूलूंगा आपका यूं दिल को छू जाना।

वो ओपन-जीप बोल के बैलगाड़ी पे बिठाना,
कभी खेतों की तो कभी पूरे गाँव की सैर कराना,
मैं नहीं भूलूंगा आपका यूं दिल को छू जाना ।

ख़ुद की थाली से अच्छे व्यंजनों को चुपके से हमारी थाली में सरकाना,
मछली खाते समय उसके कांटे चुभ ना जाएँ
इसलिए उन्हें शालीनता से अलग करना,
मैं नहीं भूलूंगा आपका यूं दिल को छू जाना ।

ख़ुद चप्पल पहन कर और हमें जूते पहनाना,
त्योहारों पे पुराने कपड़ों में रह कर हमें नए कपड़े दिलवाना,
मैं नहीं भूलूंगा आपका यूं दिल को छू जाना।

बेटे के घर से दूर जाते वक़्त ख़ुदा के आंसू छिपाना,
अच्छे से जाना और पहुंच कर फ़ोन करना,
आपका इस तरह प्यार जताना,

मैं नहीं भूलूंगा आपका यूं दिल को छू जाना।

मां से बातें करते वक़्त किसका फ़ोन है,
कहकर अपनी उपस्थिति दर्ज कराना,
बिना बोले ही सब कुछ समझ जाना,
मैं नहीं भूलूंगा आपका यूं दिल को छू जाना।

मैं आपके बारे में जितना भी लिखूं कम है,
क्योंकि हमसे आप नहीं, बल्कि आप से हम हैं।

पिता की भूमिका को कम मत समझना।।।
पिता पूरे परिवार का ढाल होता है,
पिता के होने से ही सम्पूर्ण परिवार खुशहाल होता है।

कार्यालय का हरा भरा प्रांगण

संसदीय राजभाषा समिति की तीसरी उपसमिति द्वारा इस कार्यालय के निरीक्षण की कुछ झलकियां - दिनांक 21 सितंबर 2021

माननीय संसदीय राजभाषा समिति
की तीसरी उप-समिति द्वारा
प्रधान महालेखाकार का कार्यालय, अहमदाबाद
एमएसएमई विकास संस्थान, अहमदाबाद
केन्द्रीय लोक निर्माण विभाग, गांधीनगर
भारतीय खान ब्यूरो, गांधीनगर
प्रधान मुख्य आयकर आयुक्त कार्यालय, अहमदाबाद

अभिषेक कुमार

प्रधान महालेखाकार महोदय निरीक्षण के संबंध में प्रमाणपत्र प्राप्त करते हुए

उप समिति के सदस्य धरा गुर्जरी के पुराने अंक देखते हुए

परोपकार और अंधविश्वास

मनोज कुमार बघेला

वरिष्ठ लेखा परीक्षा अधिकारी

जीवन की हर समस्या का समाधान पुरानी मान्यताओं में बताया गया है। एक उपाय तो ये है कि हम अपनी मेहनत और समझदारी से इन समस्याओं को दूर करने का प्रयास करें और दूसरा उपाय है कि धार्मिक कार्य करें। हमें प्राप्त होने वाले सुख-दुख हमारे कर्मों का ही तो प्रतिफल है। पुण्य कर्म किए जाए तो दुख का समय जल्दी निकल जाता है। मान्यताओं के अनुसार गाय, पक्षी, कुत्ता, चींटी और मछली से हमारे जीवन की सभी समस्याएं दूर हो सकती हैं। इन पांचों को जो भी व्यक्ति खाना खिलाते हैं उनके सभी दुख-दर्द दूर हो जाते हैं और अक्षय पुण्य की प्राप्ति होती है।

चींटियों को शक्कर और आटे डालने से व्यक्ति के कर्ज़ की समाप्ति जल्दी हो जाती है।

तर्क:- तत्समय यह समझाने का प्रयास किया गया होगा कि यदि कोई व्यक्ति ऋण चुकाने हेतु चींटी को दाना डालने जितना छोटा सा भी प्रयास करेगा तो कालांतर में वह ऋण मुक्त हो जायेगा और उदाहरणस्वरुप यह बताया गया होगा। समय व्यतीत होता गया और प्रतीकात्मक रूप ही रह गया, मूल सन्देश लुप्त हो गया।

गाय को रोटी या चारा खिलाने से घर की पीड़ा दूर होगी।

तर्क:- गाय को रोटी/चारा खिलाने का भी सांकेतिक महत्व है। गाय बहुत ही संवेदनशील/भावुक और पालतू प्राणी है। वर्तमान भौतिक विकास से पहले तक के समय में लोग अपनी सामर्थ्य के अनुसार गौ पालन करते थे और गाय को एक परिवार के सदस्य की तरह मानते थे। ऐसा बुजुर्गों ने भी बताया था कि दि परिवार में किसी व्यक्ति को शारीरिक/मानसिक कष्ट या दुःख होता था या फिर परिवार में किसी की मृत्यु हो जाती थी तो परिवार के अन्य सदस्यों की तरह गाय की भी आँखों में आंसू स्पष्ट दृष्टि गोचर होते थे। परन्तु सड़क के किनारे किसी भी गाय को रोटी या चारा खिलाने से आपके घर की पीड़ा दूर नहीं होगी। गाय को रोटी या चारा खिलाने का मूल संकेत यह है कि आप उन व्यक्तियों की मदद और सहयोग करें

जो भावनात्मक रूप से आपके हितैषी हैं, आपके शुभ चिंतक हैं और गाय के समान आपके परिवार के साथ भावनात्मक रूप से जुड़े हुए हैं।

कुत्ते को भोजन या रोटी खिलाने से आपके दुश्मन दूर रहेंगे।

तर्क:- कुत्ता एक निश्छल, विश्वासी तथा वफ़ादार प्राणी है। कुत्ते को भोजन या रोटी खिलाने का संकेत यह रहा होगा कि आप उन लोगों की मदद और सहायता करें जो आपके प्रति निश्छल, विश्वासी तथा वफ़ादार हैं और यदि आपके निकट ऐसे लोगों का आधिक्य होगा जो आवश्यकता पड़ने पर आपकी मदद के लिए तत्पर होंगे तो स्वाभाविक रूप से आपके शत्रु कम और दूर होते जायेंगे।

पक्षियों को दाना डालने से व्यापार में लाभ होगा।

तर्क:- चूंकि पक्षी नई दिशाओं में विचरते रहते हैं तथा दूर दूर तक भ्रमण करते है। पक्षियों को दाना डालने का आशय यह प्रतीत होता है कि व्यापारियों को अपने व्यापार की वृद्धि हेतु ऐसे लोगों के साथ अच्छा व्यवहार रखना चाहिए जो नई दिशाओं और दूर दूर तक की जानकारी रखते हों, साथ ही व्यापार वृद्धि हेतु स्वयं व्यापारी को नए व्यापार क्षेत्रों के बारे में विस्तृत सूचनाएं एकत्रित करनी चाहिए। परन्तु वर्तमान समय में लोग मूल सन्देश को भूलकर प्रतीकात्मक रूप से पक्षियों को दाना डालकर आश्वस्त होते हैं कि व्यापार वृद्धि हो जाएगी जो कि बुद्धिमत्ता नहीं है।

मछलियों को आटे की गोलियां देने पर पुरानी संपत्ति पुनः प्राप्त होने के योग बनते हैं।

तर्क:- ऐसा कहा जाता है कि जिन लोगों की पुरानी संपत्ति उनके हाथ से निकल गई है या कोई मूल्यवान वस्तु खो गई है और ऐसे लोग यदि प्रतिदिन मछली को आटे की गोलियां खिलाते हैं तो उन्हें वह संपत्ति पुनः प्राप्त होने के योग बनते हैं। यद्यपि यह पुराने समय से सुनने में आ रहा है तथापि विश्वास योग्य प्रतीत नहीं होता। शायद यहाँ संकेत रहा होगा यह समझाने का कि जिस प्रकार मछली उन स्थानों तक जाती है जहाँ तक पहुँचाने की हम कल्पना भी नहीं कर सकते अथवा उन दुष्प्राप्य स्थानों तक जाती है जो सामान्यतः पहुँच के बाहर होते हैं, उन कल्पनातीत स्थानों तक पहुँचने वाले व्यक्तियों का सहयोग किया जाए और उन स्थानों तक पहुँचने का श्रम किया जाय। मात्र मछली को आटे की गोलियां खिलाने से कोई चमत्कार नहीं होगा।

परोपकार निश्चित रूप से उत्तम मानवीय व्यवहार है परन्तु स्वार्थ सिद्धि हेतु किया गया परोपकार वास्तविक परोपकार नहीं होता, वह तो व्यापार/लेन-देन हुआ, जिस प्रकार एक निश्चित भुगतान करने के उपरांत कोई वस्तु/फल अथवा सहयोग अपेक्षित होता है या प्राप्त किया जाता है। उसका कोई फल एवं लाभ नहीं मिलता। परोपकार तो निःस्वार्थ होता है और किसी भी प्रकार के फल की अपेक्षा किये बिना किया गया परोपकार निश्चित ही सकारात्मक रूप से फलीभूत होता है।अपनी योग्यता एवं कर्म से अधिक प्राप्त करने की अभिलाषा ही भ्रष्टाचार को जन्म देती है और विडम्बना है कि अधिकांश लोग कर्म किये बिना स्वयं को अधिक योग्य समझते हैं और अत्यधिक अपेक्षाएं रखते हैं। गलत स्वमूल्यांकन एवं महत्वाकांक्षाएं व्यक्ति को असंतुष्ट बनाती हैं और भ्रष्टाचार की ओर धकेलती हैं।सन्देश यह है कि अपनी योग्यता का सुसंगत तुलनात्मक आकलन करें और अधिक महत्वाकांक्षी ना बनें। संतुष्ट रहें और निःस्वार्थ एवं अपेक्षारहित परोपकार करें।

स्वतंत्रता दिवस के अवसर पर कार्यालय के सदस्यों द्वारा की गई सजावट

पिता

मयंक मिश्रा

सहायक लेखा अधिकारी

दुनिया का अकेला ऐसा आदमी, जो यह चाहता है कि आप उस से भी अधिक सफल हों ।

पिता कड़ी मेहनत कर के पैसे कमा के लाता है और सहज ही अपने परिवार पर खर्च कर देता है । वह पिता ही है जो अपनी अधेड़ उम्र में अपने सपनों के लिए जोड़ कर रखे पैसों को बच्चों की पढाई पर खर्च कर देता है। वह पिता ही है जो दिन भर कड़ी मेहनत करने के बाद अपने बच्चों के भविष्य पर भी नज़र रखता है। पिता ही है जो दादी-दादा के बीमार होने पर उनकी देख-भाल करता है और इस बात का ध्यान भी रखता है कि इस सब के बीच बच्चों की पढ़ाई भी बाधित न हो ।

पिता जी हमारे जीवन का सबसे मजबूत स्तम्भ होते हैं लकिन फिर भी कई बार ऐसा सुनने में आता है कि बच्चे पिता के सहयोग/ मार्गदर्शन/ त्याग को अनदेखा सा करते हैं। उनको ऐसा लगता है कि पिता सिर्फ़ सख़्ती के अलावा कुछ नहीं करते हैं, जबकि असलियत यह है कि पिता को बाहरी समाज की बहुत सी सख़्ती/ चालाकियां झेलनी पड़ती हैं इस कारण कभी कभी वो घर में भी सख़्त हो जाते हैं । वास्तव में पिता समाज को हम से बेहतर समझते हैं एवं वे जीवन के उस पड़ाव से गुज़र चुके होते हैं जिस से हम गुज़र रहे होते हैं। इस कारण वे इस बात को समझते हैं कि हम जिस विषय में सोच रहे हैं उसका परिणाम क्या होगा, इसलिए हमको साफ़ शब्दों में कुछ कह देते हैं, जिसको हम उनकी सख़्ती समझते हैं । पिता की सख्ती को सहकर उस से सीख लेने वाले समाज की बहुत सी परेशानियों से बच जाते हैं ।

जिनको अपने बुजुर्ग माँ-बाप के साथ रहने को मिलता है वह सच में भाग्यशाली होते हैं। बच्चों को पालने की चिंता ही नहीं, न ही बच्चों को संस्कार देने हैं, वह सब अपने आप देख-देख कर ही सीख जाते हैं। बुजुर्ग पिता के साथ रहने का एक बड़ा फ़ायदा यह भी है कि आपको यदि किसी व्यक्ति/ बात को टालना है या मना करना है तो कह दीजिये कि पिता जी से एक बार बात कर के बताता हूँ, और बाद में कह दीजिये कि पिता जी नाराज़ हो गए या मना कर दिया । आज-कल हम लोग कुछ

ऐसे केस सुनते हैं कि बड़े-बड़े लोग अकेले रहते थे, फिर अचानक उन्होंने आत्म-हत्या कर ली क्योंकि समाज में कोई उनका शोषण कर रहा था। मुझे लगता है कि अगर ऐसे लोग अपने माँ-बाप के साथ रहते होते तो किसी के बस का नहीं था कि उन पर इतना मानसिक दवाब बना पाता कि वह आत्म हत्या के बारे में सोचने पर मजबूर हो जाते।

बूढ़ा होता पिता अपने बच्चों से कभी भी कोई भौतिक अपेक्षा नहीं करता है। पिता की अपेक्षा सिर्फ इतनी होती है कि आप बुढ़ापे में उसकी इज़्ज़त करें, उसके हाल-चाल पूछते रहें। पर आजकल हम अपने जीवन में ऐसे उलझते चले जाते हैं कि कभी-कभी उनका हाल-चाल भी नहीं पूछ पाते हैं। किसी ने सही कहा है कि स्वास्थ्य एवं माँ-बाप की असली कीमत उनको खो देने के बाद ही पता चलती है। शायद इसीलिए लोग अपने माँ-बाप के गुज़र जाने के बहुत साल बाद तक ऐसे कर्म-काण्ड करते रहते हैं जिस से उनको दूसरे लोक में सुख की प्राप्ति हो, लेकिन मुझे लगता है कि दूसरे लोक में पहुँचने के बाद कर्मकांड करने से बेहतर है कि उनके जीते जी ही उनकी सेवा करें। हमारे कार्यालय में अधिकतर लोग अन्य प्रदेशों से यहाँ आ कर नौकरी करते हैं एवं इस कारण अपने माँ-बाप से दूर रहते हैं। इसलिए हम लोगों को कम से कम उनसे इतना संवाद हमेशा करते रहना चाहिए ताकि उनको हमसे दूरी का एहसास ही न हो।

समय के साथ धीरे धीरे हमें पिता जी की बातें एवं उनकी समझ की गहराई समझ में आने लगती है पर पिता के साथ कुछ ऐसा संकोच होता है कि हम अपने मुंह से उनसे धन्यवाद भी नहीं कह पाते हैं। मेरे पिता जी मेरे जीवन का सबसे मजबूत स्तम्भ हैं। उन्होंने हमेशा मुझे आज़ादी दी कि मैं अपने निर्णय ले सकूँ। जीवन में जब भी मेरे सामने कोई दुविधा आई, उस समय मेरे पिता मेरे ऐसे मित्र थे जिस से मैं कोई भी बात खुले शब्दों में कर सकता था। उन्होंने हमेशा मेरी मूर्खतापूर्ण बातों को भी शांति के साथ सुना एवं धीरज के साथ उलझनों का समाधान बताया। मुझे जब भी ज़रुरत थी उन्होंने हर तरह से मेरा साथ दिया। उनका ऐसा व्यवहार सिर्फ़ मेरे साथ ही नहीं, बल्कि मेरे दादा-दादी, मम्मी, भाई-बहन सभी के साथ था। जब भी, जिसको भी उनकी ज़रुरत पड़ी, वे उसके साथ खड़े होते थे । आज, थोड़ा-बहुत, जो कुछ भी मैंने जीवन में पाया है, उसका पूरा श्रेय मेरे पिता जी को ही जाता है। मैं उनके आचरण को अपने जीवन में उतार सकूँ, यही मेरी हमेशा कोशिश रहेगी।

सुनना भी एक कला है

मोनिका दवे

वरिष्ठ लेखापरीक्षा अधिकारी

मुझे याद है कई साल पहले जब मैं कॉलेज में पढ़ रही थी, गांव से ताऊजी अपनी आँख के ऑपरेशन के लिए मेरठ आए थे। हम लोग वहाँ किराये के मकान में रहते थे। मकान एक वयोवृद्ध सिख दंपति का था। उनकी चार बेटियाँ छुट्टियों में सपरिवार आया करतीं थीं। छुट्टियों की ऐसी ही एक शाम उनके भरे-पूरे परिवार के सब लोग इकट्ठा हो कर बात कर रहे थे। ताऊजी उनकी बात सुनकर बोले, "ये सब लोग एक साथ बोलते हैं तो इनकी बात सुनता कौन होगा, क्योंकि हर कोई तो अपनी ही बात कह रहा है"। हम सब उनकी बात पर मुस्करा दिए और बोले, "आप सुन रहे हैं ना"। वे अत्यंत सहजता से बोले, "ये सब लोग आपस में बोल रहे हैं और सब एक साथ बोल रहे हैं, मुझे सुन कर लगता है कि ये सभी सिर्फ़ अपनी अपनी बात कहे जा रहे हैं लेकिन कोई किसी दूसरे की बात सुन नहीं रहा है"।

ताऊजी का यह सामान्य सा अवलोकन हर परिस्थिति के लिए कितना सच है ! दरअसल बोलने से भी अधिक महत्वपूर्ण है सही से सुनना, क्योंकि बोलना और सुनना ये दोनों ही क्रियायें किसी संवाद को सार्थक बनाती हैं।

संवाद का उद्देश्य ही होता है वक्ता और श्रोता के बीच एक सेतु का निर्माण करना ताकि कही जाने वाली बात को उचित परिपेक्ष्य में श्रोता द्वारा समझा जा सके। परंतु सुनने के लिए आवश्यक धैर्य और शांति बहुत कम लोगों में होते हैं जिसके कारण यह सेतु बन पाना मुश्किल होता है।

गर्भस्थ शिशु लगभग 18 सप्ताह के पश्चात् अपने आस-पास की आवाज़ों को सुन सकता है और अपनी मां की आवाज़ पहचानना शुरू कर देता है। महाभारत में अभिमन्यु द्वारा सुभद्रा के गर्भ में ही चक्रव्यूह का तोड़ जान लेने के बारे में हमने पढ़ा ही है। बोलना, पढ़ना, लिखना ये सब क्रियाएं तो हम जन्म के पश्चात धीरे-धीरे सीखते हैं ,परन्तु सुनने में तो हम जन्म से पूर्व ही सक्षम होते हैं। थोड़ा बड़ा होने पर शैक्षणिक पाठ्यक्रम में हमें सही से बोलना, लिखना, पढ़ना सब सिखाया जाता है परन्तु सुनने की कला कहीं नहीं सिखाई जाती । हाँ यह बात और है कि यदि आप विदेश जा कर पढ़ने या काम करने के इच्छुक हैं तो इंटेरनेशनल इंग्लिश लैंग्वेज

टेस्टिंग सिस्टम (IELTS) तथा टेस्ट ऑफ इंग्लिश ऐज़ अ फ़ॉरेन लैंग्वेज (TOEFL) जैसी कुछ अनिवार्य परीक्षाओं के एक भाग के रूप में सुनने का भी प्रशिक्षण दिया जाता है।

हम सुनने के लिए प्रशिक्षित नहीं होते, इसलिए मन सुनता है तो सुनने के साथ ही सही-ग़लत का मूल्यांकन करने लगता है। सुनने वाला अपने मज़बूत मन के साथ सुनता है। मज़बूत मन यानी हमारे विचारों, पूर्वानुभवों और पूर्वाग्रहों की अनेक परतें ओढ़ कर परिपक्व हुआ मन। मन की यह मज़बूती ही हमें कहने वाले की बात का सही आशय समझने से वंचित रखती है। वहीं दूसरी ओर हमारी बुद्धि कोई भी बात सुनते ही कही गई बात का तत्परता से जवाब देने के लिए तर्क ढूँढने लगती है। हम सुनते हैं पर उत्तर देने के लिए सुनते हैं, और इसलिए उत्तर ढूँढने की प्रक्रिया में वक्ता की बात के परिपेक्ष्य को ही कहीं खो देते हैं, इसलिए फिर चूकते हैं सही से सुनने में । सच मानिये, सही से सुनना भी अपने आप में एक कला है जो हम में से अधिकांश लोग नहीं जानते।

श्रीमद् भागवत में नवधा भक्ति का उल्लेख मिलता है जिसके अनुसार भक्ति के नौ प्रकार इस श्लोक में वर्णित हैं, "श्रवणं कीर्तनं विष्णोः स्मरणं पादसेवनम्। अर्चनं वन्दनं दास्यं सख्यमात्मनिवेदनम्।"। नवधा भक्ति में सर्वप्रथम श्रवण का उल्लेख मिलता है। श्रवण अर्थात ईश्वर की लीला, कथा, महत्व, शक्ति, स्रोत इत्यादि को परम श्रद्धा सहित अतृप्त मन से निरंतर सुनना। परीक्षित की श्रवण भक्ति का उदाहरण हम सभी ने सुना है।

ओशो ने सुनने की कला पर बहुत सुन्दर लिखा है। वो कहते हैं "जब सुनो तो सोचना मत, क्योंकि अगर सोचा तो तुम वह नहीं सुन पाओगे जो कहा गया। कुछ और सुनोगे। सुनते समय पूर्व धारणाओं और पक्षपात को लेकर मत चलना वरना ये पर्दे का काम करेंगी...रंग घोल देंगी जो कहा गया है उसमें। तुम कुछ का कुछ सुन लोगे...तुम सत्य को अपने हिसाब से ढाल लोगो। सुनने का सही तरीका न जानने वाले ऐसे ही लोग महावीर, बुद्ध, कृष्ण, यीशु के सच को सुनने में चूके।"

कुछ लोग अपने विचारों को अत्यंत प्रभावशाली ढंग से प्रस्तुत करने में दक्ष होते हैं। ऐसे कुशल वक्ता अपनी वाणी के प्रभाव से श्रोताओं के साथ बहुत सहजता से जुड़ जाते हैं। ऐसे ही एक महान वक्ता थे गुरुदेव रवींद्रनाथ टैगोर जिनके द्वारा रचित गीतांजलि में एक बहुत सुन्दर गीत है, "तुमि केमोन कोरे गान कोरो हे गुनी! आमि ओबाक होय शूनि. . "। यह गीत 26 अगस्त 1909 को शांतिनिकेतन में लिखा गया था। टैगोर ने 28 सितंबर 1909 को सितार वादक इनायत खान के सम्मान में

विश्वविद्यालय संस्थान हॉल में आयोजित एक कार्यक्रम में उपस्थित लोगों के बारम्बार आग्रह करने पर इस गीत को गाया था। खचाखच भरे सभागार में उपस्थित श्रोता मंत्रमुग्ध हो कर बिना किसी हलचल के शांत बैठे रहे, मानो गुरुदेव के इस एकल गीत ने उन पर जादू कर दिया हो। इस तरह के गीत लिखने वाले और अपनी वाणी और शब्दों का इतना गहन प्रभाव दूसरों पर छोड़ने की क्षमता रखने वाले वक्ता हों तो सभी अच्छे श्रोता हो सकते है, बात और भावों को ढंग से समझ सकते हैं, परंतु यदि वक्ता ऐसा प्रभावशाली ना हो, फिर भी हम अच्छे श्रोता बनकर बात और भावों को समझ सकें, यही सुनने की कला है।

सुनने का एक और पहलू है "चयनात्मक श्रवण "(सिलेक्टिव लिसनिंग)

कल्पना कीजिये कि आप किसी लाइव संगीत समारोह में गए हैं। कई तरह की आवाज़ों और शोर के बीच दूसरे क्या कह रहे हैं, यह सुनना कितना कठिन है, ऐसा आपने महसूस किया होगा । ऐसे में जिस व्यक्ति से आप संवाद करना चाहते हैं, उस व्यक्ति के शब्दों और हाव भाव पर पूरी तरह से ध्यान केंद्रित करने की आवश्यकता होती है। प्रयास करने पर आप अवांछित शोर को फ़िल्टर करके किसी विशेष चीज़ पर अपना श्रवण ध्यान केंद्रित करने में सक्षम हो पाते हैं। इसे 'कॉकटेल पार्टी इफेक्ट' के रूप में जाना जाता है। इस आपाधापी भरे समय में हमारे लिए क्या जानकारी प्रासंगिक है, यह जानना और जो जानकारी हमारे लिए अनावश्यक है, उसे फ़िल्टर करना भी अनिवार्य सा हो गया है। कई बार स्वयं को नकारात्मक विचारों से सुरक्षित रखने के लिए भी यह ज़रूरी है कि हम जानें कि क्या सुनना अनावश्यक है। यदि आपने कभी संगीत की तालीम ली हो तो आप जानते होंगे कि आरम्भिक पाठ्यक्रम में नाद और श्रुति की परिभाषा पढ़ाई जाती है। किसी भी संगीतोपयोगी ध्वनि को नाद कहा जाता है। एक सप्तक में असंख्य नाद हो सकते हैं परंतु केवल वे नाद जिन्हें हम स्पष्ट रूप से सुन सकें, समझ सकें और उनके बीच का अन्तर बता सकें, श्रुति कहलाते हैं। संगीत में ही नहीं, हमें जीवन के हर पहलू में स्वयं के लिए उपयोगी, प्रासंगिक तथा आवश्यक ध्वनियों की छंटनी करना अति आवश्यक है। यह निर्णय करने में सक्षम होना कि क्या सुनना हमारे लिए प्रासंगिक और आवश्यक है, हमारी उत्पादकता में वृद्धि करने

के साथ-साथ हमारे समय और ऊर्जा का सम्यक उपयोग करने में सहायक होता है।

क्या हम एक अच्छे श्रोता हैं? क्या हम सही से सुनने को महत्त्व देते हैं? हम में से अधिकतर लोग बोलने में इतने मशगूल हैं कि सुनना कभी हमारी प्राथमिकता रहता ही नहीं। या यूँ कहिये, सुनने के लिए जो धैर्य चाहिए वह हम में नहीं है। सहृदयता से अपने पूर्वाग्रहों और पक्षपात को किनारे रख कर किसी की बात सुन पाना आसान भले न हो, नामुमकिन भी नहीं है। बोलने के साथ-साथ सुनने पर भी ध्यान देने से संवाद और अधिक सार्थक बनता है, संबंधों में प्रेम और मधुरता आती है जिससे संवादहीनता को मिटाने में सहायता मिलती है। बहुत क़रीबी रिश्तों में भी सही से न सुन पाने के कारण एक-दूसरे के प्रति उपेक्षा का भाव पनपने लगता है। यदि आपके जीवन में एक भी ऐसा व्यक्ति है जो आपको दत्त-चित्त हो कर सुनता है तो स्वयं को सौभाग्यशाली समझिये। दत्त-चित्त, यानी अपना चित्त दूसरे को देना।

सई परांजपे द्वारा दिग्दर्शित 1998 की संगीत-प्रधान फिल्म 'साज़' में एक बहुत सुन्दर गीत है जो मेरे दिल के बहुत क़रीब है, 'सुनने वाले सुन लेते हैं कण-कण में संगीत'। इस गीत में जहाँ पपीहे के सुर, मेंढक की टर्र-टर्र का ज़िक्र है, वहीं दाल के बर्तन की खुद-बुद की आवाज़, बहते पानी की कल-कल , बूंदाबांदी की टिप-टिप, तेज़ बारिश की छम-छम जैसी हमारे परिवेश की अनेक आवाज़ों का समावेश है। यदि हम सुनना चाहें तो हर आवाज़ में संगीत है। प्रकृति में ही नहीं, हमारे आस-पास हर व्यक्ति कुछ कह रहा है या कहना चाह रहा है, कभी अपने शब्दों से और कभी अपने मौन से भी !

सुनने की कला यदि हम सही से सीख सकें तो निश्चित ही हमारे संबंधों में संवादहीनता और पूर्वाग्रह मिट जाएँगे और संबंध पहले से अधिक मधुर बनेंगे। साथ ही यह विवेक कि क्या सुनना हमारे लिए प्रासंगिक और आवश्यक है, हमारे समय और बुद्धि का अनुकूलतम उपयोग करने में सहायक होगा और हमारे समग्र विकास में योगदान देगा।

तो आइये, सुनने का प्रयास करें।

कुछ तो बात थी

राज कुमार सिंघल

सहायक लेखापरीक्षा अधिकारी

कुछ तो बात थी , कुछ तो ख़ास था
उन अमर बलिदानियों का, एक अलग अंदाज़ था।
उन अमर बलिदानियों का, एक अलग अंदाज़ था।

हो चाहे 'अपनी झांसी नहीं देने वाली' लक्ष्मीबाई
या 'खून के बदले आज़ादी देने वाले' सुभाष
भारत माँ का पुत्र था 'आज़ाद', जो रहा आज़ाद, जिया आज़ाद, मरा आज़ाद
'फोड़कर बम सुनाया बहरों को', था सच्चा सपूत भगत, जिसने जगाया लाखों को
सरफ़रोशी की तमन्ना वाले बिस्मिल हों
चाहे हो लाल-बाल-पाल की तिकड़ी
अहिंसा की मशाल थामे गांधीजी हों या
देश को एक करने वाले वल्लभ भाई

थे अनेक, अंदाज़ अनेक
भारत माँ के थे ऐसे सपूत अनेक

जिनमें कुछ तो बात थी, कुछ तो खास था
हर एक अमर बलिदानी का, एक अलग अंदाज़ था, एक अलग अंदाज़ था।

लॉकडाउन उपरांत काल्पनिक प्रथम दिवस

राजेश कुमार बागड़ी

वरिष्ठ लेखापरीक्षक

छँट गया है अंधकार आज, फिर हुआ है नया सवेरा ।
हट गया हो मेरी सांसों से जैसे, कोरोना संकट का पहरा ।।

मृत्यु से टकराकर आज मैंने जीवन का मूल्य जाना है ।
मूलभूत आवश्यकताओं की महत्ता को पहचाना है ।।

वही शहर, वही गलियाँ फिर भी नयी उमंग सी है ।
अंतर्मन में प्रस्फुटित कैसी ये उल्लास भरी तरंग सी है ।।

हुई हैं जो गलतियाँ प्रकृति-विरुद्ध, उन्हें वापस न दोहराएंगे ।
सीखे हैं जो सबक बलिदानों बाद, अपनी भावी पीढ़ियों को सिखाएंगे ।।

रंगीले राजकोट का रंग दुबारा फिज़ा में जम रहा है ऐसे ।
मौसम की पहली बारिश के बाद शहर निखर गया हो जैसे ।।

बीता जहाँ गाँधी जी का बचपन, है ये गुजरात का सिरमौर ।
दे रहा प्रगति में योगदान पुनः फैली खुशियाँ चहुँओर ।।

दिल कर रहा है मित्रों संग शहर भर का पूरा चक्कर लगाऊं ।
मेरे शहर की मिटटी की इस सौंधी महक में फिर से खो जाउँ ।।

मयूर का फिर वो भजिया होगा टी पोस्ट का नाश्ता।
लॉक डाउन के चलते जिनका भूल गए थे रास्ता ।।

कर्मभूमि में आकर ज्योंही मिले मित्र, और देखी पुरानी फ़ाइल।
लगा जैसे मिल गया हो डूबती कश्ती को एक साहिल ।।

प्रार्थना है प्रभु से कि वापस वो ऐसा बुरा वक्त न दिखाए ।
कोरोना लौट कर न आए, कोरोना लौट कर न आए

हिंदी को अपनायें हम

विश्वपति सिंह

वरिष्ठ लेखापरीक्षा अधिकारी

हिंदी का मान बढ़ाएं हम
हिंदी को अपनायें हम ।

भारत की भाषा है हिंदी
भारत की आशा है हिंदी ।
प्रेमचंद, निराला, बच्चन के
लेखन की भाषा है हिंदी ।।

हिंदी का मान बढ़ाएं हम
हिंदी को अपनायें हम
भारत की शान है हिंदी

भारत की आन है हिंदी ।
मीरा, जायसी, सूर और
तानसेन की तान है हिंदी ।।

हिंदी का मान बढ़ाएं हम
हिंदी को अपनायें हम ।

भारत का स्वाभिमान है हिंदी
भारत का वरदान है हिंदी ।
गाँधी, नेहरु और अटल के
मन का अरमान है हिंदी ।।

हिंदी का मान बढ़ाएं हम
हिंदी को अपनायें हम ।

मीरा की भक्ति है हिंदी
झाँसी की शक्ति है हिंदी ।
प्रेम फांस में पड़ी हुई
राधा की अभिव्यक्ति है हिंदी ।।

हिंदी का मान बढ़ाएँ हम
हिंदी को अपनायें हम ।

भाव हमारा है हिंदी
स्वभाव हमारा है हिंदी ।
गंगा, जमुना, सरस्वती की
निर्मल धारा है हिंदी ।।

हिंदी का मान बढ़ाएँ हम
हिंदी को अपनायें हम ।

राष्ट्रभाषा हमारी है हिंदी
मातृभाषा हमारी है हिंदी ।
दिल में हैं उद्गार बहुत
जन-जन की भाषा है हिंदी ।।

हिंदी का मान बढ़ाएँ हम
हिंदी को अपनायें हम ।

फूलों से सुशोभित कार्यालय

पथ का राही

वीणा रणदीवे

पर्यवेक्षक

जिस-जिस से पथ पर स्नेह मिला,
उस-उस राही को धन्यवाद।

जीवन अस्थिर अनजाने ही
हो जाता पथ पर मेल कहीं,
सीमित पग-डग, लम्बी मंजिल
तय कर लेना कुछ खेल नहीं,
दायें-बाएं सुख-दुःख चलते
सम्मुख चलता पथ का प्रमाद,
जिस-जिस से पथ पर स्नेह मिला
उस-उस राही को धन्यवाद।

सांसों पर अवलम्बित काया
जब चलते चलते चूर हुई,
दो स्नेह शब्द मिल गए
मिली नव स्फूर्ति थकावट दूर हुई,
पथ के पहचाने छूट गए
पर साथ-साथ चल रही याद,
जिस-जिस से पथ पर स्नेह मिला,
उस-उस राही को धन्यवाद।

एक यात्रा स्वमंथन की

वीरेन्द्र कुमार डैला

वरिष्ठ लेखापरीक्षा अधिकारी

2 करोड़ देकर डेनिस टीटो ने स्पेस की दुनिया में कदम रखा। पर सफ़र यहीं ख़त्म नहीं होता। वर्जिन के सी.ई.ओ. रिचर्ड ब्रान्सन और जेफ़ बेज़ोस ने भी इन्हीं के कदमों का अनुसरण किया। ये सब देख कर ऐसा लगता है -"ये कैसी होड़ लगी है, दौड़ लगी है, ना जाने कैसी बेसुधी है, ना जाने कैसा शोर मचा है, आज का मानव ना जाने किस और चला है।"

पहले तो सिर्फ पैसा, फिर शोहरत, बंगले, महँगी गाड़ियां , कुर्सी और पॉवर ही सर पर सवार थे। आज तो धरती भी घूमने को छोटी पड़ गयी। आज बात करते हैं अंतरिक्ष पर्यटन और ब्रह्माण्ड की सैर की।

हे मानव! ब्रह्माण्ड की सैर भी कर लो पर एक छोटी सी सैर अपनी आत्मा के अंदर भी करना ना भूलना। क्योंकि वही है ज़िंदगी का सार। आसमां में मत ढूँढ़ अपने सपनों को, सपनों के लिए तो ज़मीं ज़रूरी है। ये ज़मीं ही है जो पनाह दिए है तुझे, तेरे माँ, बाप और तेरे परिवार को । अंतरिक्ष यात्रा के बाद भी तो ज़मीं पर ही आना है। धरती कहाँ स्वर्ग से कम, बस तुझमें देखने की दृष्टि ही कम है। सब चीज़ों की खोज में जुटा है पर अपनी पहचान भूल गया है, अपना मकसद भूल गया है ।

आज इन्सान को स्वमंथन की ज़रुरत है। पैसा आज इन्सान के सर चढ़ बोल रहा है। एक बार एक अमीर आदमी से पूछा गया कि तुम तो बहुत पैसे वाले हो, तुम तो कुछ भी ख़रीद सकते हो तो उसने मुस्कराते हुए जवाब दिया "नहीं" तो सब हैरान हो गए। उसने कहा "आज मेरे लाखों रुपए बेकार हैं, उस एक रुपए के सामने जो माँ स्कूल जाते हुए देती थी क्योंकि उससे जो मैं ख़रीद कर खाता था, उस स्वाद को चखे सालों बीत गए जो आज दुनिया की महँगी से महँगी चीज़ों में नहीं आता।

धरती पर हम दौलत गिनते हैं, कल कितनी थी आज कितनी है, आज कितनी बढ़ गयी, पर ऊपर बैठा ईश्वर हँसता है और इंसान की सांसें गिनता है, कल कितनी थीं

आज कितनी कम हो गयीं । मंगल ग्रह या चाँद पर बस्ती बसाओ या अंतरिक्ष की सैर पर जाओ पर एक सैर अपनी आत्मा की भी करना जो आपको जवाब देगी ज़िंदगी में हम कितने सही और ग़लत हैं क्योंकि ये सिर्फ़ दो ही शख़्स जानते हैं "परमात्मा" और आपकी "आत्मा"।

हे इंसान! अपनी धरती को स्वर्ग बनाकर स्वर्ग की ओर बढ़ो। एक उड़ान उंचाई की ओर , तो एक गहराई में भी क्योंकि पेड़ तभी तक ज़िंदा है, जब तक उसकी जड़ें गहरी हैं। आज हमारी सबसे बड़ी ज़रूरत है - स्वमंथन की। स्व में ही स्वर्ग है।

ओणम के अवसर पर कार्यालय के सदस्यों द्वारा बनाई गई रंगोली

भाषा की आवश्यकता और संपर्क भाषा हिंदी

शिवानंद

कनिष्ठ हिंदी अनुवादक

भाषा अभिव्यक्ति का सशक्त माध्यम है, भाषा के बिना हमारा दिन-प्रतिदिन का सामान्य व्यवहार संभव नहीं है। सामान्यतः हम भाषा को केवल लिखित और मौखिक रूप में समझते हैं परन्तु भाषा का एक और प्रकार होता है जिसे सांकेतिक भाषा कहा जाता है। सांकेतिक भाषा का प्रयोग भी हम अपने दिन प्रतिदिन के व्यवहार में करते हैं। जैसे हम किसी को बुलाने के लिए हाथ से इशारा कर देते हैं, किसी प्रश्न का उत्तर देने के लिए बिना बोले या लिखे केवल सर हिला कर ही हाँ या ना में उत्तर दे देते हैं। सांकेतिक भाषा मूक और बधिर व्यक्तियों के संबंध में अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है, सांकेतिक भाषा के द्वारा वे अपने मनोभावों को व्यक्त करने में समर्थ होते हैं। अतः अपनी सुविधा के लिए हम किसी विशेष बात को प्रकट करने के लिए मौखिक, लिखित या सांकेतिक रूप में एक मानक स्थापित करते हैं कि अमुक अभिव्यक्ति को हम इस रूप में प्रकट करेंगे। जब हम किसी निश्चित ध्वनि, शब्द, प्रतीक, या संकेत का प्रयोग किसी विशेष वस्तु, प्राणी या प्रयोजन के लिए बार-बार करते हैं तो धीरे-धीरे वे भाषा का रूप लेने लगते हैं। शिशु जन्म से ही भाषा सीखना प्रारंभ कर देता है। पहले वह सांकेतिक भाषा और मौखिक भाषा ही सीखता है।

सामान्यतः तीन माह से अधिक उम्र के शिशु को हम अपनी आवाज़ या चेहरे के हाव-भाव से हंसा या रुला सकते हैं, इससे स्पष्ट होता है कि शिशु ने हमारे संकेतों और ध्वनियों को सीखना प्रारंभ कर दिया है। कोई निरक्षर व्यक्ति भी अपने भावों की अभिव्यक्ति मौखिक और सांकेतिक भाषा में बड़ी ही सहजता से कर लेता है। केवल लिखित रूप में अभिव्यक्ति करने के लिए हमें सम्बंधित भाषा के मानक व्याकरण से हो कर गुज़रना पड़ता है। अतः यह स्पष्ट है कि भाषा का प्रमुख उद्देश्य मनोभावों की अभिव्यक्ति ही है।

भारत में संपर्क भाषा के रूप में हिंदी का महत्त्व :-

स्वतंत्रता आन्दोलन से ही हिंदी भारत की संपर्क भाषा के रूप में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती रही है। संपर्क भाषा के रूप में हिंदी की भूमिका अब बढ़ती ही जा रही है। भारत में विभिन्न सोशल साइट्स जैसे यूट्यूब, फेसबुक, व्हाट्सप आदि पर भी

अधिकांश प्रयोगकर्ता हिंदी में ही संवाद स्थापित कर रहे हैं । दो हिंदीतर भाषी व्यक्तियों के बीच भी संपर्क की भाषा के रूप में हिंदी का अधिकाधिक प्रयोग किया जाता है । भारत में रोज़गार के लिए भिन्न-भिन्न राज्यों के व्यक्ति पूरे देश भर फैले हुए हैं जिनमें से अधिकांश कम पढ़े-लिखे मज़दूर वर्ग के लोग शामिल हैं । कम पढ़े-लिखे या अशिक्षित होने के कारण मजदूर वर्ग को अंग्रेज़ी भाषा की जानकारी न के बराबर होती है अतः दूसरे राज्यों के व्यक्तियों से संपर्क स्थापित करने के लिए उनके पास उनकी टूटी-फूटी हिंदी भाषा ही होती है। क्योंकि उन्हें हिंदी भाषा का भी शुद्ध ज्ञान नहीं होता है, उनके द्वारा बोली जाने वाली हिंदी में उनकी मातृभाषा का प्रभाव स्पष्ट देखने को मिल जाता है। यही कारण है कि हम पंजाब, हरियाणा, राजस्थान, बिहार, उत्तर प्रदेश, गुजरात, महाराष्ट्र या दक्षिण भारतीय राज्यों आदि के व्यक्तियों से हिंदी में बात कर के ही समझ जाते हैं कि अमुक व्यक्ति किस राज्य का है । क्योंकि उनकी भाषा शुद्ध हिंदी न होकर उनकी मातृभाषा से प्रभावित हुई दिखाई देती है परन्तु केवल उनके बोलने के लहज़े में परिवर्तन होता है। उनकी भाषा के मूल शब्द हिंदी के ही होते हैं जो विभिन्न राज्यों के व्यक्तियों को जोड़ने का प्रमुख कार्य करते हैं ।

इस तरह यदि हम देखें तो भारत के प्रत्येक राज्य के व्यक्ति कुछ न कुछ टूटी-फूटी हिंदी अवश्य बोलते हैं जिसे हिंदी का अपभ्रंश भी कहा जाता है । यही हिंदी अपभ्रंश पूरे देश में संपर्क भाषा का कार्य बड़ी आसानी से कर रही है।

इस प्रकार हम देखें तो एक राज्य के व्यक्ति दूसरे राज्य के व्यक्तियों से हिंदी भाषा के द्वारा ही अपने विचारों और भावों को अभिव्यक्ति करने में समर्थ हो पाते हैं और अपनी जीविका अर्जित करने में सक्षम होते हैं । क्योंकि सम्प्रेषण और वार्तालाप के बिना कोई भी व्यवसाय या व्यवहार करना संभव नहीं है, भारत में हिंदी भाषा दो भिन्न-भिन्न मातृभाषाओं का ज्ञान रखने वाले व्यक्तियों के बीच संपर्क स्थापित करने का प्रमुख माध्यम है इसीलिए यह कहना उचित है कि हिंदी पूरे भारत को एकता के सूत्र में बांधे हुए है । इस सम्बन्ध में स्वामी दयानंद जी की उक्ति "हिंदी द्वारा सारे भारत को एक सूत्र में पिरोया जा सकता है" पूर्ण रूप से चरितार्थ होती दिखाई देती है।

हॉर्न, नॉट ऑलवेज़ ओके प्लीज़ !

डॉ. संदीप बाजपेई

वरिष्ठ लेखापरीक्षा अधिकारी

जब हम किसी नए शहर में जाते हैं तो हमारे ऊपर उस शहर का पहला प्रभाव उस शहर की सड़कों की स्थिति, स्वच्छता और यातायात की स्थिति से पड़ता है। सड़कें बनवाने का उत्तरदायित्व हमारे नगर निगम या स्थानीय सरकार का है। रही बात स्वच्छता की, तो भले ही स्थानीय शासन का सड़कों की साफ़-सफ़ाई तथा कूड़े-कचरे का संकलन एवं उसके निस्तारण का उत्तरदायित्व हो, एक नागरिक के रूप में हम सबका भी बहुत महत्वपूर्ण उत्तरदायित्व है। उक्त में से तीसरा कारक है, यातायात की स्थिति। सरकार तथा ट्रैफ़िक पुलिस के कर्मचारियों पर यातायात को नियंत्रित करके चलाने का उत्तरदायित्व होता है, परंतु इस से भी कहीं अधिक महत्वपूर्ण है नागरिकों द्वारा इन नियमों का अनुपालन। उपरोक्त तीनों कारकों में से यातायात की स्थिति में नागरिकों के व्यवहार और अनुशासन का सर्वाधिक असर पड़ता है।

आप ने अक्सर देखा होगा कि कई वाहनों के पीछे लिखा होता है हॉर्न प्लीज़। बीच में एक बड़ा सा 'ओके' भी लिखा होता है। एक साथ इसे पढ़ने पर ये हो जाता है – "हॉर्न ओके प्लीज़"। ये लाइन पढ़ने पर मेरे मन में पहला विचार यही आता है इज़ हॉर्न आलवेज़ ओके ? क्या हम लोग हमेशा हॉर्न का उचित प्रयोग करते हैं? यह एक ऐसी बात है जिस पर हम सामान्यतः कभी अधिक विचार नहीं करते।

सड़क पर चलते हुए कई बार मैं विभिन्न प्रकार के हॉर्न, उनको बजाने के तरीके और उनकी आवृत्ति का प्रेक्षण करता रहता हूँ। मैंने अक्सर देखा है कि अगर आप सिग्नल पर सबसे आगे खड़े हैं तो बत्ती के हरे होने के कुछ सेकेंड पहले से ही पीछे वाली गाड़ियों के हॉर्न बजना प्रारंभ हो जाते हैं जैसे कि अगर वो हॉर्न नहीं बजाएंगे तो आप भूल जाएंगे कि आपको आगे जाना है और वहीं पर खड़े रह जाएंगे। ऐसे लोगों का हमें शुक्रगुज़ार होना चाहिए जो हमें वहीं पर खड़े रह जाने से बचाते हैं। यदि ग़लती से भी कभी आपको आगे बढ़ने में एक दो पल की देरी हो जाए या आप उनकी अपेक्षा धीरे चल रहे हों तो एक लंबा सा कानफोड़ू हॉर्न आपके लिए बज जाएगा। कई बार आपके दोनों ओर से एक साथ हॉर्न बजाते हुए लोग ऐसे निकलते हैं कि निर्णय करना मुश्किल हो जाता है कि करें क्या, अपने वाहन को दायीं ओर ले जाएँ या बायीं ओर।

कई बार जवाबी हॉर्न भी देखे हैं। एक बार मैंने देखा कि एक व्यक्ति सिग्नल पर रुक कर फ़ोन पर बात कर रहा था। सिग्नल हरे होने के कुछ सेकेंड बाद भी जब वह नहीं चला तो पीछे वाले ने एक-दो बार हॉर्न बजा दिया। शायद आगे वाला व्यक्ति इस बात से चिढ़ गया। थोड़ा आगे जा कर उसने अपनी गाड़ी की गति धीमी की और जिसने हॉर्न बजाया था, उसके पीछे जाकर लंबे-लंबे हॉर्न बजाने लगा। मुझे यह बहुत ही हास्यास्पद लगा परंतु मैं यह सोचने पर मजबूर हो गया कि हॉर्न का प्रयोग बदला लेने के लिए भी किया जा सकता है। वस्तुतः पीछे के वाहनों द्वारा अनावश्यक हॉर्न बजाने के कारण इस घटना को देखने के बाद मेरे मन में आया कि वाहनों में अगर पीछे भी एक हॉर्न लगाने का प्रावधान होता तो शायद बदला लेने के लिए लोगों को अपना वाहन आगे-पीछे नहीं करना पड़ता।

विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार वाहनों के हॉर्न का स्तर दिन में 55 डेसीबल तथा रात में 45 डेसीबल तक होना चाहिए। भारतीय मोटर वाहन अधिनियम की धारा 20 में कहा गया है कि चालक सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए अनावश्यक रूप से या लगातार या आवश्यकता से अधिक हॉर्न का उपयोग नहीं करेगा, या साइलेंस ज़ोन में हॉर्न का उपयोग नहीं करेगा। इस अधिनियम में 'कठोर, तीखी, तेज़ या ख़तरनाक आवाज़' वाले किसी भी मल्टीटोन हॉर्न के इस्तेमाल की भी मनाही है। अनावश्यक या अत्यधिक हॉर्न बजाने पर 1000 रुपये के दंड का भी प्रावधान है।

यातायात का शोर मानव स्वास्थ्य पर हानिकारक प्रभाव छोड़ता है। वाहनों और हॉर्न के शोर से उच्च रक्तचाप, हृदय रोग, स्ट्रोक, मधुमेह, अवसाद, स्मृति-हानि, बाधित नींद जैसी समस्याएं हो सकती है। यह शोर बच्चों की सीखने की क्षमता को नुकसान पहुंचा सकता है।

2018 में एक समाचारपत्र में छपी एक ख़बर के अनुसार गुजरात तकनीकी विश्वविद्यालय के छात्रों ने अहमदाबाद शहर के तीन मुख्य चौराहों पर वाहनों के हॉर्न से होने वाले ध्वनि प्रदूषण का अध्ययन किया और पाया कि यहाँ कई चौराहों पर शोर का स्तर निर्धारित उच्चतम स्तर से कहीं अधिक है।

वाहनों के हॉर्न से होने वाले प्रदूषण को रोकने के लिए मुंबई पुलिस ने वर्ष 2020 में एक पहल की जिस के अंतर्गत मुंबई पुलिस ने कई ट्रैफ़िक सिग्नलों पर डेसीबल मीटर लगाए जो ट्रैफिक लाइट को नियंत्रित करते हैं। यह डेसीबल मीटर सड़क पर गाड़ियों के हॉर्न से हो रहे शोर के अनुसार काम करते हैं। इस में 85 डेसीबल का स्तर तय किया गया है। अगर हॉर्न का संयुक्त शोर इस से अधिक हो तो सिग्नल पर प्रतीक्षा समय अपने आप 90 सेकेंड बढ़ जाएगा। लोगों को यदि नियत समय

पर सिग्नल पार करना है तो हॉर्न के शोर को नियंत्रण में रखना ही होगा अन्यथा प्रतीक्षा समय तब तक बढ़ता रहेगा जब तक ध्वनि का स्तर 85 डेसीबल के अंदर नहीं आ जाता।

कार के हॉर्न की ध्वनि मनुष्य की आवाज़ से लगभग 10,00,000 गुना अधिक तीव्र होती है एवं स्वास्थ्य को गंभीर नुकसान पहुंचाती है। डेसीबल स्केल लॉगरिथमिक होता है और शोर में एक डेसीबल के अंतर का अर्थ है, दस गुना अधिक शोर।

हाल ही में समाचारपत्रों में छपी एक ख़बर के अनुसार भारत सरकार का सड़क, परिवहन एवं राजमार्ग मंत्रालय वाहन निर्माताओं को यह निर्देश देने पर विचार कर रहा है कि वाहनों में हॉर्न की वर्तमान ध्वनि के स्थान पर विभिन्न भारतीय संगीत वाद्य यंत्रों यंत्रों जैसे तबला, वायलिन, बिगुल, बाँसुरी इत्यादि की आवाज़ का प्रावधान किया जाए।

हालांकि बिना कारण अधिक हॉर्न बजाने के पीछे क्या कारण हो सकता है, यह जानना मुश्किल है, फिर भी, ऐसा करने के कुछ संभावित कारण ये हो सकते हैं:

1. बहुत सारे लोग आदत से मजबूर होते हैं। इस श्रेणी के लोगों ने जब से वाहन चलाना सीखा होता है, वाहन स्टार्ट करने से लेकर बंद करने तक, हॉर्न बजाते रहना इनको आवश्यक और वाहन चलाने की सम्पूर्ण प्रक्रिया का एक अभिन्न अंग लगता है।
2. कुछ लोग हमेशा जल्दी में रहते हैं। ये समय पर नहीं निकलते और उस कमी को तीव्र गति से वाहन चलाकर पूरा करना चाहते हैं। यदि ये कहीं विलंब से पहुंचते हैं तो उसके दोषी सड़क पर चलने वाले अन्य लोग होते हैं। ये दूसरों से अपेक्षा करते हैं कि हर कोई इनके रास्ते से हट जाए क्योंकि ये जल्दी में हैं, इनका कार्य अधिक महत्वपूर्ण और इनका समय अधिक मूल्यवान है।
3. देश में सरकार, न्यायालय तथा नागरिकों के स्तर पर वी. आई. पी. संस्कृति समाप्त करने के तमाम प्रयासों के बावजूद वी. आई. पी. कल्चर कुछ लोगों के अंदर अब भी मौजूद है। अपने पद, व्यवसाय या संपन्नता के कारण इनको लगता है कि सड़क पर सबसे पहले जाने का अधिकार इन्हीं को है। ऐसा व्यवहार आयातित या बहुत महंगे वाहन चलाने वाले कुछ लोगों में भी देखने को मिलता है।
4. कुछ लोग अपने वाहनों में बाज़ार से अधिक आवाज़ वाले हॉर्न लगवा लेते हैं। फिर ये जताते हैं कि मेरे वाहन का हॉर्न सबसे शक्तिशाली है। इन को ऐसा लगता है कि भले ही सड़क पर तिल रखने की जगह न हो, इनके तेज़ आवाज़ वाला विशेष

हॉर्न बजाने से रास्ता स्वतः साफ हो जाएगा। यह प्रवृत्ति अक्सर कॉलेज जाने वाले युवा वर्ग में देखने को मिलती है।

5. कुछ लोग लगातार नॉन-स्टॉप हॉर्न बजाते हुए आपके बगल से फर्राटे से गुज़र जाते हैं। इनका ध्येय रास्ते में आने वाले हर वाहन को ओवरटेक करना होता है। जिस भी वाहन से ये आगे निकलेंगे, हर बार हॉर्न अवश्य बजाएंगे।
6. ग्रीन सिग्नल पर निकलने की अत्यधिक जल्दी करने वाले लोग ग्रीन सिग्नल होते ही हवा से बातें करना चाहते हैं। इन्हें लगता है कि इनके अलावा हर कोई सड़क पर धीरे-धीरे रेंग रहा है और इसलिए ये दूसरों के वाहनों में हॉर्न-रूपी धक्का लगाकर उनकी गति बढ़ाने का प्रयास करते रहते हैं।
7. कुछ लोग सड़क पर अपनी उपस्थिति दिखाने के लिए भी हॉर्न बजाते है, ताकि अपनी ओर दूसरों का ध्यान आकृष्ट कर सकें।
8. कुछ लोग हमेशा दूसरों पर नाराज़ रहते हैं और इसलिए अधिक हॉर्न बजाकर अपनी कुंठा व्यक्त करते हैं।
9. कुछ लोग दूसरों को सावधान करने के लिए हॉर्न बजाते हैं कि कहीं टक्कर न हो जाए । ये ऐसा हर अवसर पर करते हैं, क्योंकि इन्हें अपने पास आने वाला हर वाहन ख़तरा लगता है। इस श्रेणी में अक्सर नौसिखिये वाहन चालक आते हैं।

भारत की खचाखच भरी सड़कों से अधिक यहाँ के लोगों की यातायात की अव्यवस्थित आदतें और अनुशासन का अभाव अधिक हॉर्न बजाने के लिए उत्तरदायी हैं। सड़क पर सभ्यता और धैर्य के साथ कुछ अधिक समय व्यतीत कर लेना अनावश्यक हॉर्न बजाकर माहौल ख़राब करने से कहीं बेहतर है।

अब प्रश्न उठता है कि इस स्थिति में सकारात्मक परिवर्तन लाने के लिए क्या हम कुछ कर सकते हैं? तो उत्तर है, जी हाँ, हम बहुत कुछ कर सकते हैं। हम ही तो हैं जो सर्वाधिक कर सकते हैं।

तो ये हैं कुछ उपाय जो हम अपना सकते हैं:

1. हॉर्न के प्रयोग को आकस्मिकताओं के लिए बचा कर रखें। यदि कहीं कोई ख़तरा महसूस हो या आवश्यक हो, तभी हॉर्न बजाएँ।
2. कम आवाज़ के हॉर्न का प्रयोग करें जिससे सुनने वालों को तकलीफ़ न हो।
3. वाहन निर्माता द्वारा लगाए गए हॉर्न के अतिरिक्त कोई अन्य हॉर्न न लगवाएँ।
4. रात के समय यथा संभव हॉर्न के स्थान पर वाहन की लाइट का प्रयोग करें।

5. साइलेन्स ज़ोन में हॉर्न का प्रयोग कतई न करें।
6. कहीं पहुँचने हेतु समय की सम्यक गणना करें और ट्रैफ़िक को ध्यान में रखते हुए पर्याप्त समय लेकर निकलें ताकि आपके ऊपर और परिणामस्वरूप सड़क पर चलने वाले दूसरे लोगों के ऊपर दबाव न बने।
7. वाहन चलाते समय धैर्य रखें। आदर्श व्यवहार अपनाने का प्रयास करें।
8. कहीं रुकने पर या फ़्री लेफ़्ट टर्न पर दूसरों का रास्ता अवरुद्ध न करें। इस से दूसरे लोग हॉर्न बजाने के लिए बाध्य होते हैं।
9. अपने शहर में किसी एक दिन 'नो होंकिंग डे' या 'नो होंकिंग आवर' 'मनाने की पहल करें।

जहां आवश्यक हो, हॉर्न बजाना उचित है, पर इस के लगातार, अनावश्यक तथा अत्यधिक प्रयोग को हमें कम करना चाहिए।

सड़क पर वाहन लेकर निकलें तो हमेशा याद रखें "हॉर्न नॉट आलवेज़ ओके प्लीज़"।

ओणम के अवसर पर कार्यालय के सदस्यों द्वारा की गई पारंपरिक सजावट

मरघट

सत्येन्द्र कुमार

सहायक लेखापरीक्षा अधिकारी

ज्यों रखा कदम जब मरघट पर
मस्तक का चिंतन छिटक गया,
मरघट पर बिखरी राख देख
मेरा स्वप्नरूप मन सहम गया ।

अब सन्नाटे में उड़ती है
जो कभी चमन में खिलती थी,
पैरों के नीचे रुन्धती है
जो कभी महल में बसती थी,
अब गंधहीन सी पसरी है
जो कभी इत्र में लिपटी थी,
इस देह की ये क्या हालत है
यह देख मेरा मन ठिठक गया,
मरघट पर बिखरी राख देख
मेरा स्वप्नरूप मन सहम गया ।

जिनके चेहरे का नूर देख
चन्दा भी कभी लजाता था,
वो अंधेरों की चादर ओढ़े
अंतहीन में विचरे है,
ना अपना ना कोई पराया है
ना पास कोई धन-माया है,
इस अंधेरे की चादर से
नयनों का दर्पण चटक गया,
मरघट पर बिखरी राख देख
मेरा स्वप्नरूप मन सहम गया ।

जिनके कदमों की आहट से
बंजर जीवित हो उठते थे,
वो अंगारों की शैया पर
अब खुद बीहड़ में बसते हैं,
बीहड़ का राग सुनाते हैं
उड़ती रज में खो जाते हैं,
इस उड़ती रज में राख देख
मेरा मोह भरा दिल पिघल गया,
मरघट पर बिखरी राख देख
मेरा स्वप्नरूप मन सहम गया ।

जो अपने जलवों के दम पर
महफ़िल की शमा जलाते थे,
अब उसी शमा का धुआँ बन
मरघट की शान बढ़ाते हैं,
यहाँ आकर सब रम जाते हैं,
सब अंत यहीं सुख पाते हैं ,
जीवन की यह सच्चाई सुन
हाथों से अब कुछ फिसल गया,
मरघट पर बिखरी राख देख
मेरा स्वप्नरूप मन सहम गया ।

अपने पर ना यूँ गुमान करो
कुछ ईश्वर का गुणगान करो,
कुछ नेक कमाई कर लो तुम
न व्यर्थ में ही घमासान करो,
कुछ योग करो प्राणायाम करो
कुछ करना है वो काम करो,
है अभी वक्त सब कर लो तुम
फिर कहना ना जीवन विफल गया,
मरघट पर बिखरी राख देख
मेरा स्वप्नरूप मन सहम गया ।

शिक्षा का निजीकरण

सुखदेव गोयल

कनिष्ठ हिंदी अनुवादक

मानव अपने जीवन की शुरुआत से लेकर अंत तक सीखता रहता है। जीवन की वास्तविकता ही सीखना है। हमारे जीवन में सीखने और सिखाने में 'शिक्षा' का बहुत योगदान है। शिक्षा शब्द संस्कृत भाषा के शिक्ष धातु से बना है जिसका अर्थ है सिखाना। विद्वानों ने शिक्षा शब्द को अलग अलग शब्दों में परिभाषित करने की कोशिश की है।

भारत देश में शिक्षा तन्त्र सदियों से चला आ रहा है। गुरु शिष्य परम्परा की अनेकों किवंदतियां आज भी कई शास्त्रों में पढ़ने को मिलती हैं। पुरातन काल में शिक्षा सिर्फ उच्चवर्गीय परिवारों को ही दी जाती थी। कालान्तर में शिक्षा तक हर व्यक्ति की पहुँच आसान हो गई है। जनसंख्या बढ़ने और सीमित संसाधनों के कारण शिक्षा का निजीकरण होने लगा।

शिक्षा के निजीकरण के फलस्वरूप ही वर्तमान समय में शिक्षा नैतिकता के गुणों से परे होकर व्यावसायिक हो गई है। शिक्षा के निजीकरण के लिए वर्तमान केंद्र सरकार ने पीपीपी माध्यम लागू करने का निर्णय लिया। शिक्षा के निजीकरण के फलस्वरूप ही शिक्षा का आम जन तक पहुंचना सुलभ हुआ है।

यह कहना ग़लत नहीं होगा कि शिक्षा के निजीकरण के बहुत सारे फ़ायदे हुए हैं लेकिन इसके काफी दुष्परिणाम भी सामने आये हैं। निजीकरण के फलस्वरूप शिक्षा की गुणवत्ता में तथा इसके नैतिक मूल्यों में कमी आयी है। निजीकरण के कारण शिक्षा इतनी महंगी हो गई है कि आम आदमी का इसके महंगाई स्तर तक पहुँच पाना लगभग असम्भव हो गया है। एक अंतर्राष्ट्रीय रिपोर्ट के अनुसार भारत में अंग्रेज़ी माध्यम के विद्यालयों में विद्यार्थी सबसे ज्यादा तनावग्रस्त रहते है। हम सबको पूरी कोशिश करनी चाहिए कि आने वाली भावी पीढ़ी पर शिक्षा के दुष्परिणामों का असर न हो।

एक दिन उम्मीदों का

सुनीता शॉ

बहु-कार्य कर्मचारी

कभी-कभी एक दिन ऐसा होता है
नाउम्मीदियों वाला एक वक़्त होता है,
जब हम सोचें कुछ और
फिर कुछ और होता है ।

उस दिन भी कुछ ऐसा ही था
ख़्वाबों के रास्ते पर कदम था,
पर मानों जैसे एक मुश्किल घड़ी
ख़्वाब टूटने का भी डर था ।

लॉक डाउन चल रहा था,
और मुझे पहुंचना था परीक्षा-हाल,
जब निकली रास्ते पर तो
सूनी सड़कें और सूना माहौल था ।

अपनों से दूर रहने की कमी
तब कुछ ज्यादा महसूस हुई,
अपने भैया का चेहरा भी याद आया
और दीदी के भरोसे की भी तलब हुई ।

फिर निकल पड़ी अकेले लड़ने को
खुली सड़कों पर पैदल चलने को,
पर वक़्त बीतता गया, कोई वाहन न मिला
मैं घूरती गई ख़ाली सड़कों को ।

फिर कैसे न जाने ऊपरवाले ने
थोड़ी दया कर दी मुझपे,
एक ऑटो दिखा सामने जिसे रोका
देखा उसमें था पापा की उम्र का एक ड्राइवर ।

वो बड़ी हिफाज़त से लेकर गये
सामने वाले मोड़ पर मुझको,
कुछ दूर बस और आगे ना जा पाये
पुलिस थी , जाने नहीं देती उनको ।

फिर दिल सहमा एक दूसरे डर से
सेंटर भी तो पहुंचना था वक्त से,
घर से तो निकली थी फुर्सत लेकर
लेकिन तब मजबूर थी हालातों को लेकर ।

घड़ी की सुइयां तेज़ होती गईं
और हम धीमे रह गये,
फिर जो हुआ वो एक दूसरा इत्तेफ़ाक़
दीदी जैसी कोई एक दिख गई ।

वो निकली थी दवाई लेने अपनी मोटर-साइकिल पर
शायद उसकी मां थी बीमार,
मुझे अकेले देखा तो साथ ले गई
थोड़ी दूर और आगे ले गई ।

तब हाथ में था सिर्फ़ आधा घंटा,
मंज़िल तब भी थी बहुत दूर,
मन में तब भी थी एक आस
एक कैब मिल जायेगी ज़रुर ।
अनगिनत कोशिशों के बाद

लगभग टूट चुकी थी मैं,
आंसुओं को कसकर बांधा
पैदल ही चल पड़ी थी मैं ।

फिर कई लोगों को रोकना चाहा मैंने
पर सब कहने लगे, नहीं जाना उस तरफ़ उन्हें,
एक पुलिसवाले ने मुझे देखा, भरोसे के साथ
कहने लगा मुझे अपने मंज़िल पहुंचाएगा समय के साथ ।

हाँ, वो रास्ता मेरी मंज़िल से अब भी था बहुत दूर
उम्मीदों का दामन छोड़ने पर थी मैं,
मगर न जाने क्यों उसके भरोसे ने
मुझे भाई जैसी दी एक राहत ।

तो फिर हम निकल पड़े और मैं पहुँच गई
अपनी मंज़िल तक ठीक समय पर,
परीक्षा भी दे दी ठीक-ठाक
और मैं मुस्कुराई उस ख़ुदा पर ।

उसने सुन ली थी मेरी बात,
दूर होते हुए भी उस दिन मैंने
अपने परिवार को पाया मेरे साथ,
सब अनजान लोग, न कोई रिश्ता न कोई उम्मीद
मगर फिर भी साथ दिया जब था मुश्किल वक़्त।

हाई स्कूल रिज़ल्ट (2000 से 2021): एक जायज़ा

सौरभ सिंह,

सहायक लेखापरीक्षा अधिकारी,

मुझे याद है, उस ख़ास दिन अख़बार के कुछ स्पेशल पन्ने शाम के वक़्त छप कर दुकानों पर आते थे और आते ही छू हो जाते थे। उन में क़ैद होते थे इम्तेहान के नतीजे। बहुत बारीक लिखाई में रोल नंबर्स छपे होते थे। हर रोल नंबर के आगे **F** (फर्स्ट डिवीज़न), **S** (सेकंड डिवीज़न) या **T** (थर्ड डिवीज़न) लिखा होता था। और जिस का रोल नंबर ही अख़बार में मौजूद न हो, तो वो कम-नसीब अगले साल फिर से उसी क्लास का इम्तेहान देने की तैयारी कर ले। इंटरनेट जो आज हर जगह क़ाबिज़ है, उस वक़्त हमारे तईं नापैद था।

ये 2K यानी सन् 2000 का क़िस्सा है। गुज़री सदी का बचपन नयी सदी के आते-आते लड़कपन में दाख़िल हो चुका था। उस साल मैंने यूपी बोर्ड से हाई स्कूल (दसवीं) के इम्तेहान दिए थे और मेरे दोनों कज़िन्स ने भी। जिस दिन नतीजा आया, उस शाम अख़बार निकले ज़रूर, मगर गए कहाँ, पता नहीं। मेरे कज़िन ने शहर की ख़ूब तलाशी ली, मगर रात तक वो अनमोल पन्ने हाथ न आए। मुझे अपना नतीजा जानने में दिलचस्पी तो थी, मगर कोई जल्दबाज़ी न थी (कभी आगे भी नहीं रही, कभी भी नहीं)। ऐसा नहीं कि मुझे अपने कामयाब हो जाने का पूरा यक़ीन था, बल्कि एक अनजानी सी काहिली या बेपरवाही थी, जो मुझे इन मामलों में जल्दबाज़ होने से बचा ले जाती थी।

सुबह मेरे कज़िन ने कहीं से अख़बार का इंतेज़ाम कर ही लिया। उस ने ठंडी साँस भरते हुए सब से पहले मुझे अपना रोल नंबर चैक करने का ऑफ़र दिया। मैंने कहा, पहले आप। अब उनके रोल नंबर एक-एक करके चैक किए गए। हाय अफ़सोस! पहला नहीं मिला। हज़ार अफ़सोस! दूसरा भी नहीं मिला। ये कम-बख़्त रिज़ल्ट है कि आसमानी बिजली, जिस पर देखो टूट पड़ रही है। अब मेरे सीने में कोई शय धुक-धुक करने लगी। रोल नंबर 0741063 तलाशा गया। और लीजिए साहिब, ये रहा। और ये क्या लिखा है आगे? F? यानी first division? अमाँ नहीं भाई। क्या सच में?

मैं बज़ाहिर ख़ुश नहीं हो सकता था। और अंदर से था भी नहीं। मगर अंदर ही किसी कोने में थोड़ी बहुत ख़ुशी थी भी। जब सब को ख़बर दी गयी तो माहौल मिला-जुला सा हो गया। फिर जिन के रोल नंबर नदारद थे, उन के ग़म ग़लत करने को एक दिलासा ईजाद किया गया, रोल नंबर छपने से रह गए होंगे, हो जाता है ऐसा कभी-कभी, वरना ऐसा हो ही नहीं सकता कि दोनों ही पास न हुए हों। अब मिठाई का रास्ता साफ़ हुआ, उसे मँगवाया गया, खाया-खिलाया गया। मम्मी-पापा सब से ज़्यादा ख़ुश थे, बेपनाह बेइंतेहा ख़ुश। मेरी फ़र्स्ट डिवीज़न आना मेरे लिए कोई फ़ख़्र करने वाली बात नहीं थी, मगर उन्होंने इस पर बहुत फ़ख़्र महसूस किया। मैं अपने ददिहाल में पहला 'फ़र्स्ट डिवीज़न' था। मेरे पापा जिन्होंने बहुत कम उम्र से ट्यूशंस के ज़रिए पैसे जुटा कर मेहनत और लगन के साथ सेकंड-हैंड किताबों से पढ़ाई की और मम्मी जिन्होंने बचपन में ही अपनी माँ को खो देने के बावजूद घर के काम सँभालते हुए, सेल्फ़ मोटिवेशन के ज़रिए हाईस्कूल तक पढ़ाई की, दोनों ही कभी फ़र्स्ट डिवीज़न नहीं ला सके। मगर मेरी फर्स्ट डिवीज़न के लिए की गई मेहनत, उन की मेहनतों के क़दमों की धूल भी नहीं थी।

बाद में रिज़ल्ट कार्ड मिला तो पता चला कि मेरे 68.5% नंबर आए थे और यूपी बोर्ड में हाई स्कूल के इम्तेहान में 35 फ़ीसदी से भी कम बच्चे पास हुए थे। जो बच्चे 60% से कुछ नीचे नंबर लाते थे (यानी 59% के आस-पास) तो उसे 'गुड सेकंड' डिवीज़न कहा जाता था।

मगर आज की पीढ़ी नहीं समझ पाएगी कि उस 'गुड सेकंड' या फ़र्स्ट' डिवीज़न की क्या अहमियत होती थी। इन्हें तो 80 और 90 प्रतिशत के ताड़ पर चढ़ाया जा रहा है। इन बच्चों को नहीं पता है कि असल में इन की मेहनत को ठीक से आँका नहीं जा रहा है। सब को इनाम दे कर इनाम की अहमियत कम कर दी जा रही है।

मेरी अगली आने वाली पीढ़ी के हाईस्कूल तक पहुँचने में अभी देर है। मगर सोचता हूँ कि, कहीं तब तक ऐसा न होने लगे कि किसी तरकीब से परसेंटेज 100 से ऊपर दी जाने लगे। पैमाना कहीं इतना न भर दिया जाए कि छलकने लगे। ख़ैर, ये तो मज़ाक़ की बात हुई। दिल पर न लो बोर्ड वालों, ख़ूब नंबर बाँटो यारों।

ईश्वर का अस्तित्व

हुसैनी सादिकोट

वरिष्ठ लेखा अधिकारी

"ईश्वर की इच्छा के बिना पत्ता भी नहीं हिल सकता", "ईश्वर जो भी करता है अच्छे के लिए ही करता है" ,ईश्वर के बारे मे ऐसे कई विधान हम लोगों से सुनते आ रहे हैं। हम सब ये मानते हैं कि इस सृष्टि का सर्जन ईश्वर-अल्लाह ने किया है। हम सब यह भी मानते है कि ईश्वर जिस हाल में रखेंगे उस हाल में हम ज़िंदगी गुज़ार देंगे। जिसका कोई नहीं होता उसका अल्लाह होता है। कई लोग मानते हैं ईश्वर-अल्लाह ही हमारा मददगार , पालनहार और रखवाला है। जीवन की कठिनाइयां झेलते हुए और हर मोड़ पर ठोकरें खाते हुए कुछ लोगों का भरोसा ईश्वर से उठ जाता है। परंतु कुछ घटनाएँ, अनुभव ऐसे होते हैं जिनमें हमें ईश्वर के अस्तित्व का अहसास होता है। ऐसा अनुभव मेरे साथ भी हुआ है जो आपको बताना चाहूँगा ।

यह 1981 की बात है। मेरी बड़ी बहन के इलाज के लिए मुंबई जाना था। उस वक़्त मैने 12वीं कक्षा की परीक्षा दी हुई थी। नतीजा आना बाकी था। मैने अपनी माँ से मुंबई जाने की इच्छा प्रकट की। माँ ने मुझे अनुमति दे दी। मैं अपनी दो बहनों के साथ मुंबई जाने के लिए तैयार हो गया। मुंबई में हमारे दूर के रिश्तेदार हैं। वो समाज के प्रतिष्ठित एवं साधन संपन्न व्यक्ति थे। उनका आलीशान फ़्लैट पेडर रोड पर प्रभु-कुंज में था। उन्होंने मेरी बहन के इलाज की ज़िम्मेदारी ली थी। मुंबई में मेरी आंटी के घर पे हम लोग ठहरे थे। आंटी का घर सर जे जे रोड पर जे जे अस्पताल के सामने एक पुरानी बिल्डिंग में था। पांच मंज़िली इमारत थी। नीचे दुकानें थीं और ऊपर एक फ़्लोर पर एक-एक रूम के चार घर थे। आंटी का घर दूसरे फ़्लोर पर था। उन्होंने तीसरे फ़्लोर पर भी एक रूम ले रखा था। हमारी व्यवस्था तीसरे फ़्लोर पर थी। अंकल की गोरेगाँव में हार्डवेअर की दुकान थी। वो हर रोज़ सुबह सात बजे निकल जाते थे और रात दस बजे घर लौटते थे। उनकी दो मासूम बेटियाँ थी। छह साल की लमिया और चार साल की मारिया। दोनों बहुत प्यारी बच्चियाँ थी। मेरा समय उनके साथ खेलने में बीतता था।

एक दिन आंटी ने मझगाँव स्थित दरगाह जाने का प्रोग्राम बनाया। सुबह दस बजे हम सब मझगाँव जाने के लिए निकले। हमारे साथ लमिया और मारिया भी थीं। हम नजदीक के बस स्टॉप पर 3 नंबर की बस की प्रतीक्षा कर रहे थे। उस बस में इतनी भीड़ थी कि हमें चढ़ने का मौका नहीं मिला। आंटी ने टैक्सी बुलाई और इस तरह हम मझगाँव के नारयेलवाड़ी इलाके में पहुंचे। वहाँ हमने आधा घंटा बिताया और वापसी के लिए नारयेलवाड़ी बस स्टॉप पे 3 नंबर की बस की प्रतीक्षा कर रहे थे। मुंबई में लोकल ट्रेन और बस में चढ़ना और उतरना बहुत कठिन होता है। बस ज़्यादा देर रुकती नहीं है कुछ ही पल में चल पड़ती है और कई लोग एक साथ चढ़ भी जाते हैं और उतर भी जाते हैं। आंटी ने सबको सूचना दी हुई थी कि सबको एक साथ बस में चढ़ना है, एक दूसरे का हाथ पकड़कर रखना है। बस स्टॉप पर बहुत भीड़ थी। एक बस आई और सब लोग उस बस में चढ़ने के लिए टूट पड़े। वो बस 126 नंबर की थी जो हमारे काम की नहीं थी। आंटी ने सबको उस बस में नहीं चढ़ने का इशारा किया और सबको साईड में आने के लिए कहा। पल भर में वो बस चल पड़ी। कई लोग उस बस में चढ़ने में असमर्थ रहे। हम सब भीड़ से अलग होकर खड़े थे तब लमिया ने कहा "मम्मी मारिया कहाँ है?" यह सुनकर आंटी घबराई हुई इधर उधर देखने लगीं। सब लोग बस स्टॉप पर खड़ी भीड़ में मारिया को ढूंढने लगे। मारिया कहीं नहीं दिखाई दे रही थी। मैंने उस दरगाह के अन्दर जाकर भी देख लिया, पर वो वहां भी नहीं थी।

सब लोग परेशान थे कि चार साल की छोटी बच्ची मारिया कहाँ गई? एक बुज़ुर्ग आदमी ने कहा कि आपके साथ जो छोटी बच्ची थी उसको मैंने अभी 126 नंबर की बस में चढ़ते हुए देखा था। यह सुनकर सबके होश उड़ गए। उस बस को निकले दस मिनट हो चुके थे । मैंने तुरंत बस के अगले स्टॉप की ओर दौड़ लगाई। मैने सोचा ट्रैफिक और सिग्नल की वजह से शायद मुझे अगले स्टॉप पर वो बस मिल जाये। मैंने उस बस को दूर से देखा। मैने और तेज़ दौड़ लगाई लेकिन जब तक मैं वहाँ पहुंचा, बस वहाँ से काफ़ी दूर निकल चुकी थी। मैंने वहाँ खड़े एक टैक्सीवाले को उस बस का पीछा करने के लिए कहा और यह भी कहा कि छोटी बच्ची उसमें भूल से चढ़ गई है, लेकिन मेरी बात का उस पर कोई असर नहीं पड़ा। उसने कह दिया टैक्सी नहीं जाएगी, मुझे खाना खाने जाना है। मैंने देखा वहाँ और कोई टैक्सी नहीं थी। मै वापस नारयेलवाड़ी बस स्टॉप पहुँचा । आंटी रो रही थीं। क्या करें

कुछ समझ में नहीं आ रहा था। उस बस स्टॉप के पास खड़ा एक टैक्सीवाला सब देख रहा था, वो हमारे पास आया और बोला आप सब लोग टैक्सी में बैठो, वो बस भायखल्ला टर्मिनल पर मिल जाएगी। वहाँ थोड़ी देर तक वो बस रूकती है। सब लोग उस टैक्सी में बैठ गए, उस टैक्सीवाले ने शॉर्टकट से हमें भायखल्ला टर्मिनल तक पंहुचाया। वहाँ उतरकर बेस्ट कंटोल पॉइंट पर उस बस के बारे में पूछताछ की और सब कुछ बताया। वहां से उत्तर मिला वो बस दस मिनट पहले ही निकल गई है। बच्ची के बारे में उनको कुछ मालूम नहीं था। वहाँ एक और 126 नंबर की बस आई। उस टैक्सीवाले ने कहा आप इस बस में उनके लास्ट स्टॉप तक चले जाओ, वहाँ वो बस मिल जाएगी और कंडक्टर से बच्ची के बारे में पता चल जायेगा। मैंने आंटी से कहा कि हम दोनों इस बस में चलते हैं और बाकी लोगों को इसी टैक्सी में घर भेज देते हैं। मैंने कंट्रोल पॉइंट से टेलीफ़ोन करके अंकल को सारी बात बता दी, वो तुरंत घर के लिए निकल चुके थे। मैं और आंटी 126 नंबर की बस में बैठ गए। उस बस का लास्ट स्टॉप मंत्रालय था। उसका रूट बहुत लम्बा था। दो घंटे बाद हम मंत्रालय पहुंचे। वहाँ बेस्ट आगार के इंचार्ज अधिकारी को सारी बात बताई, उसने वहाँ खड़ी तीन 126 नंबर की बस के कंडक्टरों से पूछताछ की, पर इनमें से किसी को इसके बारे में कुछ पता नहीं था। अधिकारी ने कहा कि आप जिस बस की बात कर रहे हो वो यहाँ से निकल चुकी है। उस बस के कंडक्टर ने लापता बच्ची के बारे में कोई रिपोर्ट नहीं किया है। अतः यह तय कर पाना मुश्किल है कि आपकी बच्ची बस में लापता हुई थी। आप के पास एक ही रास्ता है, आप पुलिस कम्प्लेंट दर्ज़ करवा दो।

यह सुनकर हमारे होश उड़ गए। मासूम बच्ची मारिया मिलेगी कि नहीं, मन में कई सवाल उठ रहे थे। आंटी का बहुत ही बुरा हाल था। रो-रो कर उनकी आँखें लाल हो गई थीं, चेहरा फ़ीका पड़ गया था। मुझे डर लगा कि कहीं आंटी को कुछ हो ना जाये। वो ठीक से खड़ी भी नहीं रह पाती थीं । मैंने आंटी को सहारा दिया और एक बेंच पर बैठा दिया। क्या करें, कुछ समझ नहीं आ रहा था, दिमाग़ बिल्कुल काम नहीं कर रहा था। मैंने आंटी की ओर देखा तो देखता ही रह गया। वे अपने दोनों हाथ उठाकर आसमान की ओर देख रही थीं और मन में कुछ बोल रही थीं। मैं समझ गया था कि आंटी अल्लाह से दुआ मांग रही थीं। मंदिर में भगवान के समक्ष प्रार्थना करने वाले या मस्जिद में दोनों हाथ उठाकर दुआ माँगने

वाले लोग मैंने देखे हैं। लेकिन इस मंत्रालय के कैंपस में बेस्ट आगार के कार्यालय के पास एक बेंच पर आंटी को लाचार आँखों से दुआ मांगते देखना मेरे लिए दिल में कंपन पैदा करने वाला दृश्य था। आंटी के चेहरे के हाव-भाव से यह स्पष्ट दिखाई देता था कि वो अल्लाह से उनकी बेटी की सुरक्षित वापसी की इल्तेजा करते हुए एक माँ की बेबसी, माँ की तड़प, माँ की बेचैनी बयाँ कर रही होगी। आंटी को देखकर मेरी अंतरात्मा से भी एक आवाज़ आई कि या अल्लाह एक माँ की दुआ सुन ले और इनकी बेटी को सही-सलामत घर पंहुचा दे। आंटी जिस तरीक़े से दुआ मांग रही थीं उसे देखकर सभी को उन पर तरस आ जाये। मुझे लगा कि शायद अल्लाह को भी तरस आ जायेगा। लेकिन अल्लाह की तरफ़ से भरोसा कौन दिलाएगा कि आपकी दुआ क़बूल हो गई है, आपकी बेटी घर वापस आ जाएगी। ईश्वर-अल्लाह से विश्वास टूट जाने का कारण शायद यह भी हो सकता है कि अल्लाह की तरफ़ से हमें किस तरह से, किस रुप में मदद मिलेगी, हमें पता नहीं चलता।

मै बेंच पर आंटी के पास बैठा था। आंटी की आंखे बंद थीं। उन्होंने अपने हाथ नीचे कर लिए थे। शायद उनकी दुआ पूरी हो गई थी। वो अब थोड़ी स्वस्थ लग रही थीं। मैंने उनसे कहा "आंटी आप ठीक हो?" उन्होंने कोई जवाब नहीं दिया। मैंने कहा "आंटी अब हमें पुलिस में कम्प्लेंट दर्ज़ कर देनी चाहिए"। यह सुनकर उन्होंने अपनी आँखें खोलीं और मायूस नज़रों से मेरी ओर देखती रहीं। डिपो के अधिकारी भी वहाँ आये और पुलिस में कम्प्लेंट करने की बात कही। उन्होंने कहा कि आपकी बेटी नारयेलवाड़ी बस-स्टॉप से लापता हुई है तो आपको मझगाँव पुलिस थाने में कम्प्लेंट दर्ज करवानी होगी। मैंने आंटी को कहा कि हम घर जाते हैं। अंकल भी आ गए होंगे। उनको साथ लेकर हम मझगाँव पुलिस थाने में कम्प्लेंट दर्ज करवाएंगे। आंटी मेरी ओर देख रही थीं, कुछ बोल नहीं रही थीं। उस डिपो अधिकारी ने एक आदमी भेजकर हमारे लिए टैक्सी मंगवा दी। मैंने आंटी का हाथ पकड़कर उनको टैक्सी में बिठाया। टैक्सी घर की बिल्डिंग के पास ही खड़ी हुई। मैंने आंटी को सहारा देकर बिल्डिंग की सीढ़ियाँ चढ़ाईं। घर के दरवाज़े के पास वो खड़ी रह गईं। मैंने डोरबेल बजाई, अंकल ने दरवाज़ा खोला और आंटी को घर में ले गए। घर का दृश्य देखा तो मैं और आंटी दोनों स्तब्ध हो गए। दोनों स्टेच्यु की तरह खड़े रह गए। पांच मिनट तक किसी ने किसी से बात नहीं की। घर में देखा कि मारिया घर में है और लमिया के साथ खेल रही है। थोड़ी देर बाद आंटी ने मारिया को उठा

लिया और गले से लगाकर ज़ोर-ज़ोर से रोने लगीं। वे इतनी ज़ोर से रो रही थीं कि आसपास के पड़ोसी भी आ गए। अंकल ने उन्हें पानी पिलाया और स्वस्थ करने का प्रयास किया । थोड़ी देर बाद आंटी ने अंकल से पूछा "ये सब कैसे हुआ?, मारिया घर कैसे पहुँची ?"

अंकल ने जब मारिया की घर वापसी का किस्सा सुनाया तब मुझे अहसास हो गया कि दुआ की ताकत क्या होती है। हम समझ नहीं पाते कि ईश्वर हमें किस तरह से, किस रूप में मदद करता है। विकट परिस्थिति में हम सदा ईश्वर को कोसते हैं। ईश्वर की कृपा हमें नज़र नहीं आती। मारिया की घर वापसी का किस्सा अंकल ने इस तरह बताया था।

हम नारयेलवाड़ी बस स्टॉप पर खड़े थे तब 126 नंबर की बस में मारिया चढ़ गई थी। बस में बेहद भीड़ थी। मारिया बस में हम सबको ढूंढ रही थी। कोई नज़र नहीं आया तो वो रोने लगी। कंडक्टर ने देखा तो उसने अपने पास बुलाकर सभी यात्रियों से पूछा। बस डबल डेकर थी अतः उपर जाकर भी बच्ची के माँ-बाप को ढूँढा पर कोई नहीं मिला। कंडक्टर समझ गया कि बच्ची भूल से बस में चढ़ गई है। मारिया ज़ोर से रोने लगी। कंडक्टर हैरान हो रहा था। उस बस में बोहरा समुदाय की एक महिला सफ़र कर रही थी। वो महिला भी उसी दरगाह में आई हुई थी जहाँ उसने मारिया को हमारे साथ देखा था। उस महिला ने कंडक्टर से अनुरोध किया कि यह बच्ची हमारे समुदाय की है। मैंने इनके पेरेंट्स को देखा है। आप इस बच्ची को मुझे दे दीजिये। मैं इसको उनके घर पहुँचा दूंगी। कंडक्टर ने मना कर दिया क्योंकि वो मारिया को पुलिस को सौंप देने की बात कर रहा था। उस महिला ने फिर से विनती की पर वो नहीं माना। बस में पढ़े-लिखे और सज्जन लोग सफ़र कर रहे थे। सभी यात्रियों ने उस महिला का समर्थन किया और कंडक्टर को समझाने लगे कि यह मासूम बच्ची इनके समुदाय की है और ये उसके पेरेंट्स को जानती हैं। सबके समझाने से कंडक्टर मान गया। उसने मारिया से पूछा "बेटा इस आंटी के साथ जाना है?" मारिया ने सिर हिलाया, कंडक्टर ने उस महिला को कहा इस बच्ची को आप इनके पेरेंट्स तक पंहुचा देना। मारिया उस महिला के पास बैठ गई। महिला ने प्यार से नाम और पता पूछा। मारिया ने नाम बताया परंतु पता नहीं बता सकी। उस महिला ने फिर से पता पूछा, तब मारिया ने बताया मैं

मुहल्ले में रहती हूँ । वो महिला मुंबई सेन्ट्रल के बस स्टॉप पर उतर गई। वहाँ से टैक्सी में भिंडी बाज़ार आईं। यहाँ बोहरा समुदाय की मुख्य दरगाह है। आसपास कई मुहल्ले हैं । उस महिला ने सोचा कि शायद लोकेशन देखकर मारिया को उसके घर का रास्ता दिखाई दे। वो महिला आधे घंटे तक सभी मुहल्लों में मारिया को लेकर घूमीं पर मारिया अपना घर न बता सकी। उस महिला ने मारिया को आइसक्रीम और चॉकलेट भी खिलाई। फिर वो महिला उस मुहल्ले से बाहर निकलकर सर जे जे रोड पर आ गई। जाना पहचाना रास्ता देखकर मारिया को भी घर का रास्ता याद आ गया। मारिया ने उस महिला का हाथ पकड़कर जे जे हॉस्पिटल के सामने उनकी बिल्डिंग पास ले आई और बोली आंटी मै यहाँ रहती हूँ। सीढ़ियाँ चढ़कर दरवाज़ा भी बताया। इस तरह उस महिला ने मारिया को सही सलामत घर पहुँचाया । उस महिला ने पूरा किस्सा अंकल को सुनाया। अंकल ने उस महिला को कई बार शुक्रिया कहा और टैक्सी के पैसे देने चाहे पर उस महिला ने इनकार किया। उसने अपनी पहचान बताई, अपना एड्रेस दिया। उसी रात डिनर के बाद मै और अंकल उन के महिला के घर गए। उनको मिठाई दी, फिर एक बार शुक्रिया कहा।

वैसे देखा जाये तो ये कोई चमत्कारी घटना नहीं थी। उस महिला ने किसी दैवीय शक्ति का उपयोग करके मारिया को घर नहीं पहुँचाया था। यह एक सामान्य घटना थी। कुछ लोगों को इसे पढ़कर शायद ऐसा लगे कि इसमें ईश्वर का रोल कहाँ है? एक माँ की व्यथा, बेबसी और दर्द भरी आँखों से अल्लाह से दुआ मांगना ये सब मैंने अपनी आँखों से देखा है। मैं तो यही मानता हूँ कि मारिया का सही सलामत घर पहुँचना, माँ की दुआओं की ताकत का असर है। ईश्वर हमें फ़रिश्ते या दूत भेजकर हमारी मदद करेंगे यह मानना बेवक़ूफ़ी है। ईश्वर की मदद को हम सामान्य घटना समझकर हम उनका शुक्रिया भी अदा नहीं करते। ईश्वर की कृपा, ईश्वर की मदद को पहचानने के लिए हमें विशेष आँखों और दिमाग़ की ज़रुरत है ।

मेरी उलझन

हिमांशु धर्मदर्शी

प्रधान महालेखाकार

मेरे साथ यह अक्सर होता है।

मैं कोई एक काम करने जाता हूँ और फिर भटक जाता हूँ।

हर सुबह मेरा काम होता है कि चाय के कप मेज़ पर रखूँ। मैं कप को रसोई से उठाकर खाने की टेबल तक पहुँचता हूँ। कप को रखता हूँ। तभी मुझे दिखाई देता है कि कल का अख़बार मेज़ पर पड़ा हुआ है। उसे उठाकर मैं उसकी जगह रखने जाता हूँ। रद्दी वाला कुछ दिनों से दिखाई नहीं दिया। जगह छोटी है, अखबारों से भरी हुई, किसी तरह उसमें अखबार ठूंस कर रख देता हूँ।

मेज़ पर एक विक्स की डिबिया भी पड़ी हुई है। शायद रात को किसी ने ली थी और फिर यहीं छोड़ दी। मैं तुरंत उस को उठाता हूँ और दवाई जहाँ रहती है वह छोटी सी अलमारी खोलता हूँ। अंदर एक मेडिसिन बॉक्स है। जैसे ही उस का दरवाज़ा खुलता है, कुछ चीज़ें, जो सदियों से उसके खुलने का बेसब्री से इंतज़ार किए फँसी होती हैं, बाहर आ जाती हैं।

अब मैं पहले सारी चीज़ें करीने से लगाने के उद्यम में लग जाता हूँ। फिर मेडिसन बॉक्स की बारी आती है। उसमें मुझे बहुत सारी दवाइयाँ दिखाई देती हैं। तरह-तरह की गोलियां, कैप्सूल्स, स्प्रे, क्रीम, लोशन, घाव पर लगाने वाला मलहम, रुई, कितनी सारी चीज़ें ! मैं देखता हूँ कि कुछ तो पुरानी दिख रही हैं। एक-एक करके सारी दवाइयों की एक्सपाइरी डेट देखने के बाद कुछ को अलग करता हूँ। फिर उन्हें फेंकने के लिए बाहर जाता हूँ। बगीचे में दो डस्टबिन रखे हैं, एक सूखे कचरे के लिए, और एक गीले कचरे के लिए। जिसकी तारीख चली गई है वो वाली दवाई, इनमें से कौन से डिब्बे में जाएगी? सोचता हूँ;

तभी घर में से आवाज़ आती है, ये चाय ठंडी हो रही है। आपको नाश्ता नहीं करना क्या? फिर से सुबह-सुबह क्या काम शुरू कर दिया? मैं दवाई को किसी भी डस्टबिन में डालकर भाग लेता हूँ।

चाय को दुबारा गरम करके अभी नाश्ते को पूरा न्याय नहीं दे पाया कि बाहर गलियारे से सारे अखबार नीचे गिरने की आवाज़ आती है। मैं फिर भागता हूँ।

अंतत: न नाश्ता ठीक से होता है, न अख़बार ठीक से लगते हैं, न दवाइयाँ। और अभी भी मेज़ पर एक किताब है।

ऑफ़िस में एक फ़ाइल पर काम कर रहा हूँ, तभी यकायक एक अर्जेंट फ़ाइल सामने रखी जाती है, उसको निपटाते-निपटाते कुछ और निकल आता है, फिर कुछ और फिर कुछ और। लंबे समय बाद अधूरी फ़ाइल का मोक्ष होता है।

यह क्या हो रहा है मेरे साथ?

ठंडे दिमाग से सोचता हूँ तो कितनी बार,

- लैपटॉप पर एक काम से दूसरे काम पर कूदता रहता हूँ।
- काम करते हुए दिनभर अपना फ़ोन देखता रहता हूँ।
- कोई एक काम अभी ख़त्म नहीं हुआ कि दूसरा दिमाग़ में चल रहा है और तीसरा याद आ रहा है, पहला काम ख़त्म करने के लिए जैसे दौड़ लगाता हूँ।
- चिढ़ जाता हूँ जब किसी काम के बीच में कोई रोक देता है।
- कोई मुझ से बात कर रहा है और मैं बीच-बीच में स्क्रीन पर मेल देख लेता हूँ, या साथ-साथ आज की डाक, कुछ आया है क्या? या पत्र पर हस्ताक्षर कर लेता हूँ, या कोई फ़ाइल जो सामने रखी है, पढ़ लेता हूँ।
- कभी मैं कुछ भी न करूँ, सामनेवाले को लगता है कि उसकी बातें सुन रहा हूँ, लेकिन दिमाग़ तो फिर भी किसी और जगह ही है।
- जो भी कर रहा हूँ, उसको सामान्य-साधारण समझता हूँ क्योंकि यह तो मैं रोज़ करता हूँ और इसलिए उस पर पूरा ध्यान नहीं देता। फिर बाद में, मेरे लोग कहते हैं: "सर आप ही ने अप्रूव किया है!" अभी इतनी मासूमियत बच गई है कि उस को सुधार लेता हूँ, लेकिन ऐसा कैसा हो गया, जैसे सवाल आते हैं मन में।

मनोवैज्ञानिक इसे कहते हैं, **Attention Deficit Disorder**, किसी भी काम पर ठीक से ध्यान नहीं दे पाने की मन:स्थिति।

सुबह होते ही हम एक साथ हज़ार चीज़ों के पीछे दौड़ने लगते हैं और यह पता ही नहीं कि क्यूँ भाग रहे हैं। ज़िंदगी की ज़रूरतें, हमारी ज़िम्मेदारियां, भाग-दौड़, भुगतान के बिल, सब कुछ बढ़ गया है और हम ऐसे समय में जी रहे हैं कि लगता है एक साथ बहुत कुछ करने से ही सब कुछ कर पाएंगे।

फिर ऐसा होता है कि सब कुछ, एक हद तक ही हो रहा है। शत-प्रतिशत कुछ भी नहीं। जैसे कि सुबह न नाश्ता ठीक से होता है, न अख़बार-किताबें ठीक से लगती हैं, न दवाइयाँ।

सच में कोई महावीर ही होगा जो सही मायने में कोई काम सम्पूर्ण ढंग से पूरा कर लेता होगा।

मुझे अच्छी तरह याद है कि पाठशाला जीवन से खाने के समय हम दोनों भाई साथ में किताब लेकर बैठते थे। किताब में डूब जाते थे कि सारा खाना ख़त्म हो जाता था। जब पढ़ते थे तो बगल में रेडियो पर विविध भारती गुनगुनाती रहती थी। पढ़ते-पढ़ते जगजीत की कोई पसंदीदा गज़ल सुनाई दी तो तुरंत कॉपी के अंतिम पन्ने पर लिखने लगता था। जब ख़त्म हुई तो फिर पढ़ाई। तभी फ़ोन की घंटी बजती थी और फिर दोस्तों से बातें। फिर वापस पढ़ाई पर आए तो शाम हो गई, शाम को तो कहीं जाना था। पढ़ाई फिर अगले दिन पर चली गई।

ऐसा लगता है जैसे कि हम सारी ज़िंदगी यही करते आए हैं। एक साथ दो, तीन या चार काम करना और कहीं भी हमारा पूरा अस्तित्व शामिल नहीं होता। जो आदमी इस स्थिति से बाहर निकल कर सिर्फ़ किसी एक चीज़ को पा लेता है, वह शायद मीरा की अवस्था पर पहुँच जाता है; जो गाती है "मेरे तो गिरिधर गोपाल दूसरो न कोई।"

अगर हम इसे ज़रा बारीकी से देखें तो किसी एक काम पर सम्पूर्ण ध्यान देना भी अपने आप में एक ध्यान साधना ही है। 'ध्यान' शब्द से ही जापानी 'ज़ेन' शब्द आया है। ज़ेन परंपरा में एक शब्द है, "**ichigyo-zammai**," जिस का मतलब होता है किसी भी काम पर पूर्ण रूप से, शत-प्रतिशत ध्यान देना।

अक्सर कोई जापानी फिल्म देखता हूँ तो यह बात साफ़ समझ आती है। अगर वो चाय की कटोरी पकड़ेंगे तो दोनो हाथों से, धूपबत्ती भी पूजा में रखेंगे तो दोनो हाथों से, मेहमान को सूप का कटोरा भी देंगे तो दोनो हाथों से।

जब दो हाथ जोड़े, दोनों हाथों को साथ मिलाया, सारा ध्यान वहाँ लगाया। मतलब कि जो काम कर रहे हो उस में अपने आप को पूरा शामिल करो। कुछ भी आधा-अधूरा नहीं।

अगर खाना खा रहे हो तो सिर्फ़ खाओ। चल रहे हो तो सिर्फ़ चलो, कोई क्रिया कितनी भी सामान्य क्यों न लगती हो, उस पर अपना सारा ध्यान केंद्रित करो, सारी

ऊर्जा उस पर लगाओ तभी तो उस में जान आएगी। यही तो सत्य का साक्षात्कार है।

जब हम किसी काम को करते हुए ख़ुद कहीं और होते हैं, पूरी तरह जुड़े नहीं हैं, तो फिर हम अपने आप को कैसे ठीक से व्यक्त कर सकते हैं?

कहना आसान है, लेकिन करना बहुत ही कठिन। क्योंकि बड़ी मुश्किल से हम किसी क्षणभर, उसी क्षण से जुड़े रह सकते हैं।

कैसे करें हम?

एक कोशिश कर सकते हैं।

जैसे कि जब चाय पियें तो सिर्फ़ चाय पियें, सुबह चलने जाएँ तो मोबाईल घर छोड़ कर सिर्फ़ चलें।

या टीवी देखें या फिर खाना खाएँ , और उसी से जुड़ें । अब खाना ज़्यादा स्वादिष्ट लगेगा, उस को बनाने में क्या-क्या मिलाया है शायद जान पाएँ।

जब कोई पौधा ध्यान से लगाओगे तो मिट्टी का स्पर्श पता चलेगा। फिर उस को रोज़ सिर्फ़ देखोगे तो रोज़ कुछ नया दिखाई देगा।

यह सब तो छोटे-छोटे काम हैं, नौकरी का क्या?

ज़रूरत है, कामों की एक लिस्ट बनाने की, फिर उस को आवश्यकता अनुसार लगाने की और फिर उसी क्रम में काम करने की। याद रहे,समय तो उतना ही है, जितना पहले था। हम अक्सर किसी काम के लिए कितना समय चाहिए इस के बारे में ग़लत साबित होते है। तभी तो काम इकट्ठे हो जाते हैं और फिर हम एक साथ कई काम करने लगते हैं। अब और नहीं। हर काम के लिए एक समय दीजिए।

जिस किसी काम की बारी है, उस को पूरा न्याय दें, सारा ध्यान उसी पर लगाएँ। जो समय दिया है उस समय में कुछ और न करें। पता चला कि काम करते-करते कोई ख़याल बीच में आ सकता है, जब उस का पता चले, उस ख़याल को भी सिर्फ़ जानें, अच्छा, यह ख़याल बीच में आया, फिर अपने कार्य पर लग जाएँ।

जब सारा अस्तित्व जुड़ेगा, जब हम भागदौड़ से दूर हटेंगे तो बहुत सारी चीज़ें दिखने लगेंगी, जो पहले कभी नहीं दिखाई दीं। अब वह साधारण काम और बेहतर हो जाएगा। जब हम इस तरह जीने की कोशिश करते हैं, ऐसा लगता है जैसे जीवन में शांति आ रही है। मानो एक चमत्कार ही हो गया। हर वस्तु को, हर काम को, प्रार्थना की ऊंचाई मिल जाएगी।

जब प्रार्थना की ऊंचाई मिलेगी तो हर वस्तु, हर कार्य, हर व्यक्ति को हमारा सम्पूर्ण सम्मान मिलेगा, हमें वह अच्छे लगने लगेंगे और हर क्षण स्नेह, आदर और कृतज्ञता से भर जाएगा।

हिन्दी में सर्वाधिक कार्य के लिए शील्ड प्राप्त करते प्रधान महालेखाकार (ले.प.-II) तथा प्रधान महालेखाकार (लेखा एवं हक) कार्यालयों के सदस्य

मातानी पछेड़ी

मातानी पछेड़ी के मूल निर्माता वाघरी ख़ानाबदोश हैं जो गुजरात में साबरमती नदी के किनारों पर रहते थे। मातानी पछेड़ी का शाब्दिक अनुवाद है 'देवी माँ के पीछे'। ये पवित्र वस्त्र मंदिरों में पृष्ठभूमि के रूप में उपयोग किए जाते हैं।

दीवार पर लगाई जाने वाली इन कलाकृतियों को बनाने में मूल रूप से दो प्राकृतिक रंगों का प्रयोग होता है - काला और लाल। इन कलाकृतियों को हैंड-ब्लॉक प्रिंट और फ़्री-हैंड पेंटिंग का उपयोग करके बनाया जाता है।

कपड़े के बड़े टुकड़ों पर बनाई जाने वाली इन कलाकृतियों के मध्य में देवी का एक बड़ा चित्र तथा उसके आसपास देवी से संबंधित किंवदंतियों, जानवरों एवं अन्य कलात्मक कृतियों का चित्रण होता है।

डांग दरबार

भारत पर ब्रिटिश शासन के दौरान दरबार के लिए शासक और अन्य गांव-प्रमुख इकट्ठा होते थे। आदिवासी बहुल डांग जिले में आज भी यह परंपरा जारी है। कई पूर्व राजाओं और नायकों को यहाँ का आदिवासी समाज शीर्षक और प्रिवी पर्स समाप्त होने के बाद भी वही दर्जा देता है। आज भी गुजरात के राज्यपाल डांग के कुछ पूर्व राजाओं को वंशानुगत राजनैतिक पेंशन प्रदान करते हैं।

डांग दरबार सापुतारा पहाड़ियों में स्थित डांग जिले के अहवा में आमतौर पर हर साल मार्च-अप्रैल में होली से कुछ दिन पहले आयोजित किया जाने वाला त्योहार है। इस अवसर पर स्थानीय निवासी शानदार जनजातीय नृत्य करते हैं जिसमें लोग संकेंद्रित वृत्तों में घूमते हैं तथा ताल और वायु वाद्य-यंत्रों की धुन पर नाचते हैं।

कई वाद्ययंत्र इस जिले की विशेषता हैं। सभी पुरुष पारंपरिक परिधान और रंगीन पगड़ी पहनते हैं तथा महिलाएं पारंपरिक परिधान के साथ चांदी के गहने पहनती हैं।

इस उत्सव में भाग लेने के लिए बड़ी संख्या में आदिवासी और दुनिया भर से पर्यटक आते हैं। यह त्यौहार आदिवासी समुदायों के पारंपरिक परिधान देखने का एक शानदार अवसर है।